अजितप्रसाद

(१९५३)

विद्वद्वर्य, धर्मानुरागी, जैनजाति हितेच्छु

पूज्य पिताजी श्रीयुत् पंडित अजितप्रसादजी

आपकी दी हुई दिक्षा और शिक्षा के फल स्वरूप
अजिताश्रम पाठावली की यह छोटी सी
भेट लेकर हम आपके पुत्र
पुत्रियाँ उपस्थित
हुए हैं।
इसे स्वीकार करके
हमको उत्साहित कीजिये कि
आपकी शिक्षा से प्रतिदिन लाभ उठाते
रहें और आपकी दैनिक चर्या का अनुकरण करते रहें।

सरला देवी — शान्तिकुमारी

सुमतिप्रसाद जिन्दल — वीरनन्दन जिन्दल

अभि[illegible] जिन्दल — कैलाशम[illegible] जिन्दल

अनन्त चतुर्दशी २४६१-१९३५.

अजिताश्रम चैत्यालय

२३ जुलाई १९२९ को श्रीमान् जैनधर्मभूषण ब्रह्मचारी शीतलाप्रसादजी चातुर्मास के लिये अजिताश्रम पधारे। २५ जुलाई को बाराबंकी से मूर्ति लाकर अजिताश्रम के कमरे में विराजमान कर दी गई।

इस ही कमरे के नीचे बैठक में छत में बिजली का पङ्खा लगा हुआ था। और वहाँ एक तख़्त पर ब्रह्मचारीजी बैठते, लेटते, सोते थे। और दूसरे तख़्ते पर उनके बराबर श्रीयुत् अजितप्रसादजी काम करते और सोते थे।

प्रतिदिन रात को ३ बजे सुबह से ६ बजे तक श्रीगोम्मटसार जीवकांड, कर्मकांड और आत्मानुशासन के अंगरेजी अनुवाद और टीका का जो श्रीयुत् जुगमन्दिरलाल जैनी का बनाया हुआ था सुधार किया जाता था।

२० सितम्बर, अनन्त-चौदश, को कुएँ से जल लेने के लिये अजिताश्रम में जलयात्रा उत्सव हुआ। अभिषेक हुआ। पूजा हुई। २५ सितम्बर को रात्रि में स्तोत्र, भजन पाठ आदि आधीरात तक हुए।

१ अगस्त को अजिताश्रम चैत्यालय की नींव की पहली ईंट श्रीब्रह्मचारीजी ने जमाई। फिर श्रीयुत् पंडित अजितप्रसाद मुझ अभिनन्दनप्रसाद, मेरी धर्मपत्नी शकुन्तलादेवी, मेरे बड़े भाई सुमतिप्रसादजी की धर्मपत्नी श्रीमती दर्शनमाला, और उनकी पुत्री शारदाकुमारी, (वह खुद I C S. पदप्राप्ति के

लिये लंदन गए हुए थे), मेरी बहन शान्तिकुमारी, मेरे भाई वीरनन्दन और कैलाशभूषण, मेरी भानजी प्रेमलता, मुन्शी जुगमन्धरदास, उनकी धर्मपत्नी और उनके पुत्र निर्मलकुमार ने नींव में ईंट चूना जमाया। मेरी बड़ी बहन श्रीमती सरला-देवी जी, मेरे बहनोई श्रीयुत् बाबू हरिश्चन्द्रजी, और उनकी पुत्री शकुन्तला-देवी उस दिन उन्नाव थे। उस समय वर्षा खूब जोर से हो रही थी और हम लोग छात्रियां लिये स्तोत्र पाठ आदि पढ़ रहे थे, और भीगते भी जाते थे। वह पवित्र समय अजिताश्रम वासियों के जीवन में चिरस्मरणीय रहेगा; इस कारण उस का विस्तरित वर्णन किया गया।

१६ नवम्बर से १८ नवम्बर तक, मंत्र के ८००० जप होकर वेदी-प्रतिष्ठा हुई। चौक की पंचायत ने ब्रह्मचाराजी से आग्रह किया कि अजिताश्रम चैत्यालय के लिये मूर्ति पसन्द कर लें, और बाराबकी की मूर्ति वापस करा दें। ब्रह्मचाराजी ने दो मूर्तियाँ पसन्द कीं।

एक मूर्ति श्वेत पाषाण की, पद्मासन, सुन्दर आकृति, करीब ७५० बरस की प्रतिष्ठित है। घुटनों के बीच के स्थान पर एक लेख है; वह जहाँ तक पढ़ा गया यहां लिखा जाता है:—

संवत् १२२५ जेठ सु
दि १२ देवसहाय तत सुत वि वा
सल षाह ××× पुत्र × × प्रतिष्ठापिता

और आसन के सामने बेल बूटे में छिपा हुआ अर्द्ध चंद्रा-

कार चिह्न है, जिस से यह मूर्ति श्री चन्द्रप्रभ भगवान् की प्रतीत होती है।

दूसरी मूर्ति अत्यन्त प्राचीन है। यह पीतल वा अष्ट धातु की है। आसन के पीछे चार छेद हैं, दो छेदों में एक छत्रमंडल खड़ा हो जाता है, जिस पर सर्प के चिन्ह हैं। यह प्रतिमा पार्श्व प्रभू के नाम से प्रतिष्ठित हुई होगी। दूसरे दो छेदों में भी ऐसा ही मंडलाकार बड़ा छत्र लगता होगा, ऐसा अनुमान है, किन्तु वह मिला नहीं। आसन के नीचे एक छेद बीच में है, इसमें भी फणदार नाग का चिन्ह लगा होगा, ऐसा मालूम पड़ता है। इस पर कोई लेख नहीं है। फूल पत्ती के चिन्ह, अभिषेक पीछे कपड़े से सुखाए जाने की रगड़ से घिस गये हैं। हाथ और शरीर की लम्बाई अच्छी है। यह मूर्ति अर्द्धपद्मासन वा सुखासन है। ऐसीअर्द्धपद्मासन मूर्तियां उत्तर भारत में देखने में नहीं आती हैं; किन्तु शहर हैदराबाद-दाक्षिण के केसरगंज मन्दिर में बीसों प्राचीन मूर्तियां अर्द्धपद्मासन विराजमान हैं। जब भद्रबाहु स्वामी के समय उत्तर भारत में १२ बरस का दुष्काल पड़ा था, तो वह अधिक मुनिसंघ को लेकर दाक्षिण चले गये थे। और जो मुनि यहां रह गए उनको कालदोष से दिगम्बर मुद्रा को छोड़कर वस्त्र धारण करने पड़े। इससे सिद्ध होता है कि दक्षिण में दिगम्बराम्नाय शुद्ध कायम रही, और अर्द्धपद्मासन दिगम्बर मूर्ति शुद्धाम्नाय की है।

यह दोनों मूर्तियाँ चौक के मन्दिर से १२ जनवरी १९२७

को ब्रह्मचारीजी के साथ जाकर बहुत से लोग अजिताश्रम लाये और मंत्र का जप करके चैत्यालय में विराजमान करके मज्जन, अभिषेक, पूजन किया।

विशेष जप, पूजा, हवन आदि १३, १४, १५ जनवरी तक जारी रहा। १५ जनवरी को बृहत् उत्सव हुआ। जल-यात्रा के पश्चात् लखनऊ के सब जैनियों ने मिलकर अभि-षेक पूजन किया और फिर बिरादरी के नर नारियों का जीमन हुआ। सत्यार्थ यज्ञ पुस्तक बाँटी गई।

अब अजिताश्रम चैत्यालय की कुछ विशेषता यहाँ लिखी जाती है।

अभिषेक के सम्बन्ध में ऐसा विचार फैला हुआ है कि स्त्री को जिन प्रतिमा अभिषेक करने का अधिकार नहीं है। युक्ति यह दी जाती है कि स्त्री का शरीर सदा अशुद्ध रहता है। यह युक्ति समझ में नहीं आती। और बहुत से स्थानों में स्त्रियां अभिषेक पूजन करती है। अतः इस विषय में पूर्णतया विचार-पूर्वक स्त्रियों को जिन-प्रतिमा-अभिषेक और पूजन का अधिकार अजिताश्रम-चैत्यालय में प्राप्त है। और वह इस अधिकार से लाभ उठाती हैं।

अजिताश्रम-चैत्यालय में वेदी में एक ही प्रतिमा विराज-मान है। और जिनेन्द्र की वैराग्य छवि और ध्यानमुद्रा के दर्शन में विघ्न के कारण शीशे और रंगारंग के बेलबूटे आदि वस्तु नहीं हैं।

अजिताश्रम-चैत्यालय में दर्शकों की सुविधा के वास्ते बिजली की रौशनी और छत के पंखे का भी प्रबंध है।

अजिताश्रम चैत्यालय में स्थापना केसरिया चावल की जगह लौंग से की जाती है। लौंग पुष्प है। उसकी सूरत भी पुष्प की है। वह स्वतः सुगन्धित है। स्थापना की लौंग का दहन संस्कार भले प्रकार सुगमता से जल्दी हो जाता है, और चावल मुश्किल से देर में जलते हैं। अखंड चावल स्थापना करते करते खण्डित होजाते हैं, लौंग खण्डित नहीं होती।

पूजा की सामग्री थोड़ी चढ़ाई जाती है। और या तो उसका हवन, या नदी में प्रवाह कर दिया जाता है, या किसी ब्राह्मण आदि को खाने को दे दी जाती है।

नित्य पूजा विधि इस प्रकार है कि थाली के बीच में १ या ३ स्वस्तिका देव-गुरुशास्त्र के स्थापना रूप, ऊपर अर्द्ध चन्द्र ‿ सिद्धशिला के चिह्न स्वरूप, और दश दिशाओं में स्वस्तिका या बिन्दु दश दिशा वा दश दिकपाल के संकेत रूप बनाये जाते हैं और इन्हीं पर अष्ट द्रव्यादि अर्घ्य चढ़ाये जाते हैं, जिससे थाली में सामग्री का बेढंगा ढेर सा नहीं हो जाता है, बल्कि थाली सुसज्जित नजर आती है। देवपूजा सम्बंधित ६४ ऋद्धियों के १० श्लोक पढ़ते समय
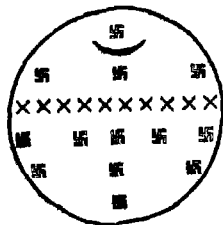
प्रत्येक श्लोक पर लौंग चढ़ाई जाती है और लौंगों की शोभनीक रेखा सिद्ध शिला के नीचे बन जाती है।

यदि ऊपर लिखी बातें अनुचित हों, तो विज्ञजन युक्ति और प्रमाण सहित लिखकर मुझे अनुगृहीत करें।

चैत्यालय का खर्च अजिताश्रम से होता है। अब तक चैत्यालय के धर्मकोष में आया हुआ दानद्रव्य १६६|||-)। ट्रेडिंग ऐण्ड बैंकिंग हाउस लखनऊ में जमा है।

यह पुस्तक यथाशक्ति शुद्ध करके प्रकाशित की गई है। किन्तु तब भी कुछ अशुद्धियां रह गई हैं। कहीं कहीं जो हिन्दी पाठ छपी और लिखित पोथियों में मिला उस का अर्थ स्पष्ट समझ में नहीं आया। जैसा पृष्ठ ४२ पर "तिहा यत" शब्द सत्यधर्म की स्तुति मे। देव-शास्त्र-गुरु-पूजा का चतुर्विंशति जिन स्तवन, और प्राकृत की तीनों जयमाल नहीं छापी गई हैं। चौबीस तीर्थंकरों की नामावली पहले ही आ चुकी है; और प्राकृत भाषा प्रायः समझ में नहीं आती है।

श्रीस्वामी पद्मनन्दी आचार्य कृत सिद्ध पूजा के भावाष्टक और द्रव्याष्टक पृष्ठ १८ पर आमने सामने छाप दिये गये हैं, जिस में उपासक की जैसी इच्छा हो वैसा अष्टक पढ़े।

यदि इस पुस्तक से जो धर्म प्रचारार्थ लागत के दाम पर ही दी जायगी, जैन जनता का उपकार हुआ, तो दूसरी आवृत्ति अधिक प्रयत्न करके प्रकाशित की जायगी।

अजिताश्रम लखनऊ ११-६-३५ अभिनन्दनप्रसाद जिन्दल

श्रीजिनाय नम

सुप्रभात स्तोत्र

यत्स्वर्गावतरोत्सवे यदभवज्जन्माभिषेकोत्सवे ।
यद्दीक्षा-ग्रहणोत्सवे यदखिलज्ञान-प्रकाशोत्सवे ।
यन्निर्वाण-गमोत्सवे जिनपतेः पूजाद्भुत तद्भवै ।
सङ्गीत स्तुति-मङ्गलै प्रसरतां मे सुप्रभातोत्सवः ॥ १ ॥
सुप्रभातं सुनक्षत्रं श्रेयः प्रत्यभिनन्दितम् ।
देवता ऋषयः सिद्धाः सुप्रभातं दिने-दिने ॥ २ ॥
सुप्रभातं तवैकस्य वृषभस्य महात्मनः ।
येन प्रवर्तितं तीर्थं भव्य-सत्व-सुखावहम् ॥ ३ ॥
सुप्रभातं जिनेन्द्राणां ज्ञानोन्मीलित-चक्षुषाम् ।
अज्ञान-तिमिरान्धानां नित्यमस्तमितो रविः ॥ ४ ॥
सुप्रभातं जिनेन्द्रस्य वीरः कमल लोचनः ।
येन कर्माटवी दग्धा शुक्लध्यानोग्रवह्निना ॥ ५ ॥
सुप्रभातं सुनक्षत्रं सुकल्याणं सुमङ्गलम् ।
त्रैलोक्य हित-कर्तॄणां जिनानामेव शासनम् ॥ ६ ॥

दर्शन पाठ

अद्य मे सफलं जन्म नेत्रे च सफले मम।
त्वामद्राक्षं यतो देव हेतुमक्षय - सम्पदः ॥ १ ॥
अद्य संसार गम्भीर पारावारः सुदुस्तरः।
सुतरोऽयं क्षणेनैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ २ ॥
अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमले कृते।
स्नातोऽहं धर्मतीर्थेषु जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ३ ॥
अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्वमङ्गलम्।
संसारार्णवतीर्णोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ४ ॥
अद्य कर्माष्टकज्वालं विधूतं सकषायकम्।
दुर्गतेर्विनिवृत्तोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ५ ॥
अद्य सौम्याग्रहाः सर्वे शुभाश्चैकादशस्थिता।
नष्टानि विघ्नजालानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ६ ॥
अद्य नष्टो महाबन्ध कर्मणां दुःखदायकः।
सुखसङ्गं समापन्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ७ ॥
अद्य कर्माष्टकं नष्टं दुखोत्पादनकारकम्।
सुखाम्भोधिनिमग्नोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ८ ॥
अद्य मिथ्यान्धकारस्य हन्ताज्ञान-दिवाकरः।
उदितो मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ९ ॥
अद्याहं सुकृतीभूतो निर्धूताशेष-कल्मषः।
भुवनत्रय-पूज्योऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ १० ॥

अष्टाष्टकं पठेद्यस्तु गुणानन्दित-मानसः ।
तस्य सर्वार्थसंसिद्धि जिंनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ११ ॥

दर्शन पाठ २

दर्शनं देव देवस्य दर्शनं पाप नाशनं ।
दर्शनं स्वर्ग सोपानं दर्शनं मोक्षसाधनं ॥ १ ॥
दर्शनेन जिनेन्द्राणाम् साधूनां वंदनेन च ।
न चिरं तिष्ठते पापं छिद्रहस्ते यथोदकं ॥ २ ॥
वीतराग मुख दृष्ट्वा पद्मराग समप्रभं ।
जन्म-जन्म-कृतं पापं दर्शनेन विनश्यति ॥ ३ ॥
दर्शनं जिनसूर्यस्य संसार-ध्वांत-नाशनं
बोधनं चित्त-पद्मस्य समस्तार्थ-प्रकाशनं ॥ ४ ॥
दर्शनं जिन चन्द्रस्य सद्धर्मामृतवर्षनं
जन्मदाघ विनाशाय वर्द्धनं सौख्य वारिधे ॥ ५ ॥

जीवादि तत्व प्रतिदर्शकाय
सम्यक्त्व-मुख्याष्ट- गुणाश्रयाय
प्रशान्ति-रूपाय दिगम्बराय
देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥ ६ ॥

चिदानंदैक-रूपाय, जिनाय, परमात्मने
परमात्म-प्रकाशाय नित्यम् सिद्धात्मने नमः ॥ ७ ॥
अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम
तस्मात् कारुण्य भावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ८ ॥
नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता जगत्रये
वीतरागसमो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ ९ ॥
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने
सदामेस्तु सदामेस्तु सदामेस्तु भवे भवे ॥ १० ॥
जिन धर्माद् विनिर्मुक्तो माभवच्चक्रवर्त्यपि
शान्त-चित्तो दरिद्रोपि जिन धर्म-निवासितः ॥ ११ ॥
जन्म-जन्म कृतं पापं जन्म-कोटिमुपार्जितं
जन्म मृत्युर्जरातंकं हन्यते जिन दर्शनात् ॥ १२ ॥

अभिषेक पाठ

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवंद्य जगन्त्रयेशं,
स्याद्वाद - नायकमनन्तचतुष्टयार्हम् ।
श्रीमूल-संघ-सुदृशां सुकृतैक-हेतु-
जैनेन्द्र, यज्ञ विधिरेष मयाभ्यधायि ॥ १ ॥

(यह पढ़कर पुष्पाजलि क्षेपण करना)

सौगन्ध्य-संगत-मधुव्रत झंकृतेन,
संवर्ण्यमानमिव गन्धमनिन्द्यमादौ।
आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्द-वन्द्य,
पादारविन्दमभिवन्द्यजिनोत्तमानाम्॥ २॥
(यह पढकर अपने ललाटादि स्थानों में तिलक लगाना)
ये सन्ति केचिदिह दिव्य-कुल-प्रसूता,
नागाः प्रभूतबलदर्पयुताविबोधाः।
संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां,
प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम्॥ ३॥
(यह पढकर अभिषेक के लिये आगे की भूमि का प्रक्षालन करना)
क्षीरार्णवस्य पयसा शुचिभिःप्रवाहैः,
प्रक्षालितं सुरवरैर्यदनेकवारम्।
अत्युद्‌यमुद्यतमहं जिनपादपीठं,
प्रक्षालयामि भवसंभवतापहारि॥ ४॥
(जिस प्रक्षालित आसन पर विराजमान करके अभिषेक करना हो उस पर 'श्री' वर्ण लिखना)
इन्द्राग्नि दण्ड-धर-नैऋत-पाशपाणि-
वायूत्तरेश-शशि मौलि फणीन्द्र चन्द्राः
आगत्य यूयमिह सानुचराः सचिन्हाः,
स्वं स्वं प्रतीच्छत बलिं जिनपाभिषेके॥ ५॥
(दश दिशाओ मे निम्नलिखित मंत्र पढकर दश दिक्पाल स्थापन करना)

१. ॐ आं क्रौं ह्रीं इन्द्र आगच्छ आगच्छ, इन्द्राय स्वाहा।

२. ॐ अग्ने आगच्छ आगच्छ, अग्नये स्वाहा।

३. ॐ यम आगच्छ आगच्छ, यमाय स्वाहा।

४. ॐ नैऋत आगच्छ आगच्छ, नैऋताय स्वाहा।

५. ॐ वरुण आगच्छ आगच्छ, वरुणाय स्वाहा।

६. ॐ पवन आगच्छ आगच्छ, पवनाय स्वाहा।

७. ॐ कुवेर आगच्छ आगच्छ, कुवेराय स्वाहा।

८. ॐ ऐशान आगच्छ आगच्छ, ऐशानाय स्वाहा।

९. ॐ धरणीन्द्र आगच्छ आगच्छ, धरणीन्द्राय स्वाहा।

१०. ॐ सोम आगच्छ आगच्छ, सोमाय स्वाहा।

यः पाण्डुकामलशिलागतमादिदेव-
मस्नापयन्सुरवरा सुरशैलमूर्ध्नि।
कल्याणमीप्सुरहमक्षत-तोय-पुष्पैः
संभवायामि पुर एव तदीय विम्वम ॥ ६ ॥

('श्री' वर्ण पर जिनविम्व को स्थापना करना)

सत्पल्लवार्चित मुखान्कलधौतरूपय-
ताम्रार-कूट-घटितान्पयसा सुपूर्णान्।
संवाह्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान्,
संस्थापयामि कलशान् जिन वेदिकान्तेः ॥ ७ ॥

(वेदी के कोनो में चार कलशों की स्थापना करना)

आभिः पुण्याभिरद्भिः परिमलबहुलेनामुना चन्दनेन,
श्रीदृक्पेयैरमीभिः शुचिरुदकचयैरुद्गमैरेभिरुद्धैः।
हृद्यैरेभिर्निवेद्यैर्मखभवनमिमैर्दीपयद्भिः प्रदीपै
र्धूपैः प्रायोभिरेभिः पृथुभिरपि फलैरेभिरीशं यजामि।८।

(यह पढकर अर्घ्य चढ़ाना)

दूरावनम्रसुरनाथ किरीट-कोटी-
संलग्नरत्नकिरणच्छवि धूसरांघ्रिम्।
प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टे
र्भक्त्या जलैर्जिनपतिं बहुधाभिषिञ्चे ॥ ९ ॥

(शुद्ध जल की धारा प्रतिमा पर छोड़ना)

भक्त्या ललाट तट देशनिवेशितोच्चै-
र्हस्तैश्च्युता सुरवरा-सुरमर्त्यनाथैः।
तत्काल-पीलित महेक्षु-रसस्य धारा,
सद्यः पुनातु जिनबिम्बगतैव युष्मान्॥ १० ॥

(इक्षुरस की धारा०)

उत्कृष्ट वर्ण नवहेमरसाभिराम,
देहप्रभावलयसंगमलुप्तदीप्तिम्।
धारां घृतस्य शुभगन्ध गुणानुमेयां,
वन्देऽर्हतां सुरभि संस्नपनोपयुक्ताम्॥ ११ ॥

(घृतरस की धारा०)

संपूर्णशारदशशांक-मरीचि-जाल,
स्यन्दैरिवात्मयशसामिव सुप्रवाहैः ।
क्षीरैर्जिनाः शुचितरैरभिषिच्यमाणाः,
संपादयन्तु मम चित्त-समीहितानि ॥ १२ ॥

(दुग्धरस की धारा०)

दुग्धाब्धि-वीचि-पयसांचित-फेनराशि,
पाण्डुत्वकान्तिमवधारयतामतीव ।
दध्नां गता जिनपतेः प्रातिमां सुधारा,
संपद्यतां सपदिवाञ्छित-सिद्धये वः ॥ १३ ॥

(दही की धारा०)

संस्नापितस्य घृतदुग्धदधीक्षुवाहैः,
सर्वाभिरौषधिभिरर्हतमुज्ज्वलाभिः ।
उद्वर्तितस्य विदधाम्यभिषेक मेला,
कालेय कुंकुम रसोत्कट वारिपूरैः ॥ १४ ॥

(सर्वौषधिरस की धारा०)

इष्टैर्मनोरथशतैरिव भव्य पुंसां,
पूर्णैः सुवर्ण कलशैर्निखिलैर्वसानैः ।
संसार-सागर-विलंघन-हेतु-सेतु-
माप्लावये त्रिभुवनैकपतिं जिनेन्द्रम् ॥ १५ ॥

(कलशो से अभिषेक)

द्रव्यैरनल्प घनसार चतुः समाद्यै
रामोदवासितसमस्तदिगन्तरालैः ।
मिश्रीकृतेन पयसा जिनपुंगवानां
त्रैलोक्य-पावनमहं स्नपनं करोमि ॥ १६ ॥

(सुगधित जल की धारा०)

मुक्ति-श्रीवनिता-करोदकमिदं पुण्याकुरोत्पादकं
नागेन्द्र-त्रिदशेन्द्र-चक्र-पदवी राज्याभिषेकोदकम् ।
सम्यग्ज्ञान-चारित्रदर्शनलता-संवृद्धि-संपादकं
कीर्ति-श्री-जय साधकं तव जिन स्नानस्यगन्धोदकम् ॥१७॥

(गन्धोदक मस्तक पर लगाना)

निर्मलं निर्मलीकरण पवित्रं पापनाशनम् ।
जिन गन्धोदकम् वन्दे सर्व-पाप-प्रणाशनम् ॥

(गन्धोदक लगाना)

देव शास्त्र गुरु पूजा

ॐ जय जय जय । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु ।
णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं ॥
ॐ अनादि-मूल-मन्त्रेभ्यो नमः

(पुष्प चढाना)

चत्तारि मंगलं, अरहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णतो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा, अरहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णतो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहंत सरणं पवज्जामि, सिद्ध सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि केवलिपण्णतो धम्मो सरणं पवज्जामि ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण करना)

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा ।
ध्यायेत्पञ्चनमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥
अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थांगतोऽपि वा ।
यः स्मरेत्परमात्मानं स वाह्याभ्यन्तरे शुचिः ॥२॥
अपराजित मन्त्रोयं सर्वविघ्नविनाशनः ।
मंगलेषु च सर्वेषु प्रथमं मंगलं मतः ॥ ३ ॥
अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः ।
सिद्धचक्रस्यसद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥४॥
कर्माष्टक विनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् ।
सम्यक्त्वादि गुणोपेतं सिद्ध चक्रं नमाम्यहम् ॥५॥
विघनौघाः प्रलयं यान्तु शाकिनी भूत पन्नगाः ।
विषं निर्विषताम यान्तु स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥६॥

(पुष्प क्षेपण करना)

उदक-चन्दन-तन्दुल-पुष्पकैश्चरुसुदीप सुधूप फलार्घ्यकै ।
धवल मङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथ महं यजे ॥ ७ ॥

ॐ श्रीभगवज्जिन सहस्र नामभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्री मज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं
स्याद्वाद-नायकमनन्त-चतुष्टयार्हम् ।
श्रीमूल संघसुदृशां सुकृतैक-हेतु-
र्जैनेन्द्र-यज्ञविधिरेषमया व्यधायि ॥
स्वस्ति त्रिलोक-गुरवे जिनपुङ्गवाय
स्वस्ति स्वभाव महिमोदय सुस्थिताय ।
स्वस्ति प्रकाश सहजोर्ज्जित दृङ्मयाय
स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ॥
स्वस्त्युच्छलद्विमल बोध सुधाप्लवाय
स्वस्ति स्वभाव परभाव-विभासकाय ।
स्वस्तित्रिलोक-विततैक-चिदुद्गमाय
स्वस्ति त्रिकालसकलायत विस्तृताय ॥
द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं ।
भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तु-कामः ॥
आलंवनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन् ।
भूतार्थ-यज्ञ-पुरुषस्य करोमि यज्ञम् ॥
अर्हत्पुराण पुरुषोत्तम पावनानि,
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेकएव
अस्मिन ज्वलद्विमलकेवल-बोध-वह्नौ ।
पुण्य समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥

श्री वृषभो नमः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अजितः ।
श्री संभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अभिनन्दनः,
श्री सुमितः स्वस्ति, स्वस्ति श्री पद्मप्रभः
श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः ।
श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शीतलः
श्रीश्रेयान्स स्वस्ति, स्वस्ति श्री वासुपूज्यः ।
श्री विमलः स्वस्ति स्वस्ति श्री अनन्तनाथः
श्री धर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शान्तिनाथ. ।
श्री कुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अर नाथः ।
श्री मल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री मुनिसुव्रतः ।
श्री नमि स्वस्ति, स्वस्ति श्री नेमिनाथः
श्री पार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री वर्धमानः ।

(पुष्पाञ्जलि क्षेपण)

नित्याप्रकम्पाद्भुत केवलौघाः स्फुरन्मनः पर्य्यय शुद्ध बोधाः ।
दिव्या वधिज्ञान बलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥
कोष्ठस्थ धान्योपममेकबीजं संभिन्न संश्रोत्र-पदानुसारि ।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥
संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादन-घ्राण-विलोकनानि ।
दिव्यान्मतिज्ञान बलाद्वहन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥
प्रज्ञा प्रधानाः श्रमणाः समृद्धः प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः ।
प्रवादिनोऽष्टांग निमित्त विज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।

जंघावलिश्रेणिफलाम्बुतन्तु प्रसून-बीजांकुर चारणाव्हा ॥
नभोऽङ्गणस्वैर विहारिणश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।
अणिम्निदक्षाःकुशला महिम्नि, लघिम्नि शक्ता कृतिनोगरिम्णि
मनोवपुर्वाग् बलिनश्च नित्यं स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥
सकाम रुपित्व वशित्वमैश्य प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः ॥
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयोनः।
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोर पराक्रमस्थाः ।
ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥
आमर्ष सर्वौषधयस्तथाशीविर्षविषाद्दष्टिविषं विषाश्च ।
सखिल्ल विडजल्ल मलौषधीशाःस्वस्ति क्रियासुःपरमर्षयो नः ॥
क्षीरं स्रवन्तोऽत्रघृतंस्रवन्तोमधुस्रवन्तो प्यमृतं स्रवन्तः ।
अक्षीण संवास-महानसाश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥

सार्वः सर्वज्ञनाथः सकलतनुभृतां पाप सन्ताप हर्ता ।
त्रैलोक्याक्रान्त कीर्तिः क्षतमदनरिपुर्घातिकर्मप्रणाशः
श्रीमान्निर्वाण सम्पद्वरयुवतिकरालीढकण्ठः सुकण्ठैः
देवेन्द्रैर्वन्द्यपादो जयतु जिनपतिः प्राप्त कल्याणपूजः ॥
जय जय जय श्री सत्कान्ति प्रभो जगतां पते ।
जय जय भवानेव स्वामी भवाम्भसि-मज्जताम् ॥
जय जय महामोहध्वान्तप्रभात-कृतेऽर्चनं ।
जय जय जिनेश त्वं नाथ प्रसीद करोम्यहम् ॥

ॐ ह्रीं भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्

ॐ ह्री भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ट तिष्ठ ठः ठः
ॐ ह्री भगवज्जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट
(इति स्थापनम्)

देवि श्री श्रुत-देवते भगवति त्वत्पादपंकेरुह
द्वन्देयामि शिलीमुखत्वमपरं भक्त्यामयाप्रार्थ्यते ।
मातश्चेतसि तिष्ठ मे जिनमुखोद्भुते सदा त्राहि मां ।
दृग्दानेन मयि प्रसीद भवतीं सम्पूजयामोऽधुना ।

ॐ ह्री जिनमुखोद्भूत स्याद्वाद-नय-गर्भित द्वादशाङ्ग श्रुतज्ञान ! अत्र अवतर अवतर संवौषट
ॐ ह्री जिनमुखोद्भूत स्याद्वाद-नय-गर्भित द्वादशाङ्ग श्रुतज्ञान अत्र तिष्ट तिष्ठ ठ ठः
ॐ ह्री जिनमुखोद्भूत स्याद्वाद-नय-गर्भित द्वादशाङ्ग श्रुतज्ञान ! अत्र ममसन्निहितो भव भव वषट
(इति स्थापनम्)

संपूजयामि पूज्यस्य पादपद्मं युगं गुरोः ।
तपः प्राप्त प्रतिष्ठस्य गरिष्ठस्य महात्मनः ॥

ॐ ह्री श्री सम्यक् दर्शन सम्यक् ज्ञान सम्यक् चारित्रादि गुण विराजमान आचार्योपाध्याय सर्वसाधुसमूह, अत्र अवतर अवतर संवौषट ।

ॐ ह्री श्री सम्यक् दर्शन सम्यक् ज्ञान सम्यक् चारित्रादि गुण विराजमान आचार्योपाध्याय सर्वसाधुसमूह, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ ।

ॐ ह्री श्री सम्यक दर्शन सम्यक् ज्ञान सम्यक् चारित्रादि गुण विराजमान आचार्योपाध्याय सर्वसाधुसमूह, अत्र मम सन्निहिता भव भव वषट ।

(इति स्थापनम्)

देवेन्द्र नागेन्द्र नरेन्द्र वन्द्यान् शुम्भत्पदान शोभित सार वर्णान् ।
दुग्धाब्धि-संस्पर्धि गुणैर्जलौघै र्जिनेन्द्र सिद्धान्त यतीन् यजेहम्

ओ३म् ह्रीं परब्रह्मणे अनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोष रहिताय षट-चत्वारिंशत्गुणसहिताय अर्हतपरमेष्ठिने जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा

ओ३म् ह्रीं श्री जिन मुखोद्भूत स्याद्वाद-नय गर्भित द्वादशांग श्रुतज्ञानाय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

ओ३म् ह्रीं सम्यक्दर्शन सम्यक्ज्ञान सम्यक् चारितादि गुण विराजमान आचार्योपाध्याय सर्वसाधु समूहेभ्य: जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

ताम्यत्त्रिलोकोदरमध्यवर्ति समस्तसत्वाहितहारिवाक्यान् ।
श्रीचन्दनैर्गन्धविलुब्धभृङ्गै र्जिनेन्द्र सिद्धायन्तयतीन् यजेहम्

ओ३म् ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो भवातापविनाशाय चदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अपार संसार महासमुद्र-प्रोत्तारणे प्राज्यतरीन् सुभक्त्या
दीर्घाक्षताङ्गैर्धवलाक्षतौघैः जिनेन्द्र सिद्धान्त यतीन् यजेहम् ॥

ओ३म् ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

विनीतभव्याब्जविबोधसूर्यान् वर्यान् सुचर्य्यानकथनैकधुर्य्यान्
कुन्दारविन्दप्रमुखैःप्रसूनै र्जिनेन्द्र सिद्धान्तयतीन् यजेहम् ॥

ओ३म् ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो कामवाणविनाशनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा

कुदर्पकन्दर्प विसर्प सर्पत्प्रसह्य निर्णाशन वैनतेयान् ।
प्राज्याज्य सारैश्चरुभिःरसाढ्यै र्जिनेन्द्र सिद्धान्तयतीन् यजेहम् ॥

ओ३म ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा

ध्वस्तोद्यमान्धीकृत विश्वविश्व मोहान्धकार प्रतिघातदीपान् ।
दीपैः कनत्कांचन भाजनस्थै जिनेन्द्र सिद्धान्तयतीन् यजेहम्

ओ३म ह्रीं देवशास्त्र गुरुभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा ।

दुष्टाष्ट कर्मेन्धन पुष्ट जाल संधूपने भासुर धूम केतून् ।
धूपैर्विधूतान्य सुगन्धगन्धै जिनेन्द्र सिद्धान्तयतीन् यजेहम् ।

ओ३म् ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

लुभ्यद्विलुभ्यन्मन सामागम्यान् कुवादिवादा स्खलितप्रभावान्
फलैरलं मोक्षफलाभिसारै जिनेन्द्र सिद्धान्त यतीन् यजेहम् ॥

ओ३म ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ।

सद्वारि-गन्धाक्षतपुष्पजातै नैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः ।
फलैर्विचित्रै र्घन पुण्य योगान् जिनेन्द्र सिद्धान्त यतीन् यजेहम् ॥

ओ३म् ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्य-पद प्राप्तयेअर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

ये पूजां जिननाथ शास्त्रयमिनां भक्त्या सदा कुर्वते,
त्रैसन्ध्यं सुविचित्र काव्य रचनामुच्चारयन्तो नराः ।
पुण्याढ्या मुनिराजकीर्ति सहिता भूत्वास्तपो-भूषणा
स्ते भव्या सकलावबोधरुचिरा सिद्धिं लभन्ते पराम्

(इत्याशार्वाद:)

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदास्तु मे
सम्यक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारणं ।
श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदास्तु मे
सज्ज्ञानमेव संसारवारणं मोक्षकारणं ।
गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदास्तु मे
चारित्रमेव संसारवारणं मोक्षकारणं ॥

("ॐ देवशास्त्रगुरुभ्यो नम" १०८ या ६ जाप)

सिद्ध पूजा

ऊर्ध्वाधोरयुतं सबिन्दु सपर ब्रह्मस्वरा-वेष्टितं
वर्गा-पूरित दिग्गताम्बुजदलं तत्सन्धि-तत्वान्वितम् ।
अन्तः पत्रतटेष्वनाहतयुतं-ह्रींकार संवेष्टितं
देवं ध्यायति यः म मुक्ति-सुभगो वैरीभकण्ठीरवः ॥

ॐह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपते ! सिद्ध परमेष्ठिन् !
अत्र अवतर अवतर सवौषट् ।
ॐह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपते ! सिद्ध परमेष्ठिन् !
अत्र तिष्ट तिष्ट ठ: ठ ।
ॐह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपते ! सिद्ध परमेष्ठिन् !
अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् । (स्थापनम्)

निरस्त-कर्म-सम्बन्धं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् ।
वन्देऽहं परमात्मानममूर्त्तमनुपद्रवम् ॥ १ ॥

[सिद्धयन्त्र की स्थापना]

(भावाष्टक)	(द्रव्याष्टक)
निजमनोमणिभाजनभारया,	सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं,
समरसैकसुधारसधारया।	हान्यादिभावरहितं भववीतकायम्।
सकलबोधकलारमणीयकं,	रेवापगावरसरो यमुनोद्भवानां
सहजसिद्धमहंपरिपूजये॥	नीरैर्यजे कलशगैर्वरसिद्धचक्रम्

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सहजकर्मकलंकविनाशनै	आनन्दकन्दजनकं घनकर्ममुक्तं,
रमलभावसुवासितचन्दनैः।	सम्यक्त्व शर्मगरिमंजननार्तिवीतम्।
अनुपमानगुणावलिनायक,	सौरभ्य-वासित-भुवं हरिचन्दनानां
सहजसिद्धमहं परिपूजये॥	गन्धैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम्

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने भवाताप विनाशनाय चन्दनं०॥

सहजभाव सुनिर्मलतन्दुलैः,	सर्वावगाहन गुणं सुसमाधिनिष्ठं
सकलदोषविनाशविशोधनैः।	सिद्धं स्वरूप निपुणंकमलंविशालं।
अनुपरोधसुबोध निधानकं	सौगन्ध्यशालिवनशालिवराक्षतानाम्
सहजसिद्धमहं परिपूजये॥	पुंजैर्यजे शशिनिभैर्वर सिद्धचक्रम्।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीतिस्वाहा।

समयसारसुपुष्पसुमालया,	नित्यं स्वदेह परिमाणमनादिसंज्ञं,
सहजकर्मकरेणविशोधया।	द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम्।
परमयोगवलेनवशीकृतं,	मन्दार-कुन्द-कमलादि-वनस्पतीनां
सहजसिद्धमहंपरिपूजये॥	पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम्

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्प० ।

अकृतबोधसुदिव्यनिवेद्यकै,
विहितजातजरामरणान्तकै ।
निरवधिप्रचुरात्मगुणालय
सहजसिद्धमह परिपूजये ॥

ऊर्द्ध-स्वभाव-गमनं सुमनोव्यपेतं
ब्रह्मादिबीज सहितं गगनावभासम् ।
क्षीरान्न साज्यवटकै रसपूर्ण-गर्भैः
नित्यं यजे चरुवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं० ।

सहजरत्न रुचि प्रतिदीपकैः,
रुचिविभूतितमः प्रविनाशनै ।
निरवधिस्वविकाशविकाशनै.,
सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥

आतङ्क-शोक-भय रोग-मद प्रशान्तं
निर्द्वन्द्व-भावधरणं महिमानिवेशम् ।
कर्पूरवर्ति बहुभिः कनकावदातै-
र्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकार विनाशनाय दीपं०

निजगुणाक्षयरूपसुधूपकै,
स्वगुणघातिमलप्रविनाशनैः ।
विशदबोधसुदीर्घसुखात्मकं,
सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥

पश्यन्समस्तभुवनं युगपन्नितान्तं
त्रैकाल्यवस्तु विषये निविडप्रदीपम् ।
सद्द्रव्य गन्ध घनसारविमिश्रितानां
धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं० ।

परमभावफलावलिसम्पदा,
सहजभावकुभावविशोधया ।
निजगुणास्फुरणात्मनिरंजन,
सहजसिद्धमहं परिपूजये ।

सिद्धासुराधिपति-यक्ष नरेन्द्र-चक्रै-
र्ध्येयं शिवमचलभव्यजनैःसुवन्द्यम् ।
नारिङ्ग-पुंग-कदली-फल-नारिकेलैः
सोऽहंयजे वर-फलैर्वरसिद्धचक्रम् ।

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं० ।

नेत्रान्मीलि विकाशभावनिवहैरत्यन्तबोधायवै
वार्गन्धाक्षतपुष्पदामचरुकैः सद्दीपधूपैः फलैः।
यश्चिन्तामणिशुद्धभावपरम ज्ञानात्मकैरर्चये
सिद्ध'स्वादुमगाधबोधमचलं सचर्चयामो वयम् ॥

गन्धाढ्यं सुपयोमधुव्रतगणै, सङ्ग वरं चन्दनं
पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकम् ।
धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये
सिद्धानां युगपत्क्रमाय, विमलं मेनोतरं वांछितम् ॥

ॐह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ।

ज्ञानोपयोग विमलं विशदात्मरूपं । सूक्ष्म स्वभाव परमं यदनन्तवीर्यम् ।
कर्मौघकक्षदहनं सुखशस्यबीजम् । वन्देसदानिरूपमम् वरसिद्धचक्रम् ॥

त्रैलोक्येश्वर वन्दनीय चरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं
यानाराध्य निरुद्धचण्डमनसः सन्तोपितीर्थंकराः ।
सत्सम्यक्त्व विबोध वीर्यविशदाऽव्याबाधताद्यैर्गुणै
र्युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥

ॐह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्ध परमेष्ठिने महार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा

(पुष्पाञ्जलि क्षेपण)

जयमाल

विराग सनातन शांत निरंश, निरामय निर्भय निर्मल हंस
सुधाम विबोध निधान विमोह, प्रसीद विशुद्धसुसिद्धसमूह ॥१॥
विदूरित संसृत भाव निरंग, समामृत पूरित देव विसंग
अबन्ध कषाय विहीन विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥२॥

निवारित दुष्कृत कर्म विपाश, सदामल केवल केलिनिवास।
भवोदधि पारग शान्त विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥३॥
अनन्तसुखामृत सागर धीर, कलंकरजोमल भूरिसमीर।
विखण्डित काम विराम विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥४॥
विकार विवर्जित तर्जितशोक, विबोध सुनेत्र विलोकितलोक।
विहार विराव विरंग विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥५॥
रजोमलखेदविमुक्त विगात्र, निरन्तर नित्य सुखामृत पात्र।
सुदर्शनराजित नाथ विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥६॥
नरामरवन्दित निर्मलभाव, अनन्त मुनीश्वर पूज्यविहाव।
सदोदय विश्व महेश विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥७॥
विदंभ वितृष्ण विदोष विनिद्र, परापर शंकर सार वितन्द्र।
विकोप विरूप विशंक विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥८॥
जरामरणोज्झित वीतविहार, विचिन्तित निर्मल निरहंकार।
अचिन्त्य चरित्र विदर्प विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥९॥
विवर्ण विगन्ध विमान विलोभ, विमाय विकाय विशब्द विशोभ।
अनाकुल केवल सार्व विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥१०॥

असमसमयसारं चारुचैतन्यचिह्नं
परपरणति मुक्तं पद्मनन्दीन्द्रवन्द्यम्।
निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं
स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम्॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये महा अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

अविनाशी अविकार परमरसधाम हो,
समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो,
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अनादि अनंत हो,
जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवंत हो ॥
ध्यान अग्नि कर कर्मकलंक सबै दहै,
नित्य निरंजन देव सरूपी हो रहे,
ज्ञायक के आकार ममत्व निवारिके,
सो परमातम सिद्ध नमूं सिर नाय के ॥
अविचल ज्ञान प्रकाशते, गुण अनन्त की खान ।
ध्यान धरे सो पाइये, परम सिद्ध भगवान ॥

(इत्याशीर्वादः)

("ॐ नमो सिद्धाणं" जाप १०८ या ९)

प्रकीर्णक अर्घ

उदक-चन्दन-तन्दुल-पुष्पकै श्चरुसुदीप सुधूप फलार्घकैः ।
धवल मङ्गलगानरवाकुले, जिनगृहे जिनचन्द्रमहं यजे ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा

उदक-चन्दन-तन्दुल-पुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमङ्गलगानरवाकुले, जिनगृहे जिनपार्श्वमहं यजे ॥
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय श्रावण सुदी सप्तम्यां मोक्ष मंगल प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकै श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकै ।
धवलमङ्गलगानरवाकुले, जिनगृहे जिनदेवमहं यजे ॥
ॐ ह्रीं श्रीविद्यमान विंशति तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकै श्चरुसुदीपसुधूप फलार्घकै ।
धवलमंगलगानरवाकुले, जिनगृहे जिनक्षेत्रमहं यजे ॥
ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर - गिरनार - चपापुर - पावापुर - कैलाश सुकल्याणकभूमयश्च सप्ततिशत क्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकै श्चरुसुदीप सुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले, जिनगृहेजिनबिम्बमहं यजे ॥
ॐह्रीं श्रीपचमेरु सम्बन्धो चैत्याल्यस्थ, नदीश्वरद्वीपे द्वी पंचाशत्-जिनालयस्थ कृत्रिम अकृत्रिम् चैत्यालयस्थ जिन बिम्बेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकै श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले, जिनगृहे जिनहेतु महंयजे ॥
ॐ ह्रीं दर्शनाविशुद्धयादि षाडसकारणेभ्यो अर्घ्यम निर्वपामीति स्वाहा

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकै श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवल मंगलगानरवाकुले, जिनगृहे जिनधर्ममहं यजे ॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हन्मुखकमलसमुद्भूता उत्तमक्षमामार्दव आर्जव शौच सत्य-संयम-तप-त्याग-आकिंचन-ब्रह्मचर्याणि दशलक्षणिकधर्मेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकै श्चरुसुदीप सुधूपफलार्घकैः ।
धवल मंगलगानरवाकुले, जिनगृहे जिनरत्नमहं यजे ॥

ॐ ह्रीं अष्टागसम्यकदर्शनाय अष्टविधसम्यकज्ञानाय त्रयोदश प्रकार सम्यक चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

शान्ति पाठ

शान्तिजिनंशशीनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रं,
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तमम्बुजनेत्रं ।
पंचममीप्सितचक्रधराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च,
शान्तिकरं गणशान्तिमभीप्सुः, षोडसतीर्थकरं प्रणमामि ॥
दिव्यतरुः सुर पुष्प सुवृष्टि दुंन्धुभिरासनयोजनघोषौ,
आतपवारणचामरयुग्मे, यस्य विभाति च मंडलतेजः ।
तं जगदर्चित शान्तिजिनेन्द्रं शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि,
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्ति मह्यमरं पठते परमां च ॥

येभ्यर्चितामुकुटकुंडलहाररत्नैः,
शक्रादिभिः सुरगणैस्तुतपादपद्माः ।
ते मे जिनाःप्रवरवंशजगतप्रदीपा
स्तीर्थकराः सतत शान्तिकरा भवन्तु ॥

संपूजाकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।
देशस्यराष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥
(चन्दन की धारा डालनी चाहिये)

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः,
काले काले च सम्यगवर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ।
दुर्भिक्षं चौर मारि क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके,
जैनेन्द्रं धर्म चक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥
(पुष्पांजलि क्षेपण)

प्रध्वस्त घातिकर्माणा केवलज्ञानभास्कराः ।
कुर्वन्तु जगत शान्ति, वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥
प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।
शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः सङ्गतिः सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्वे,
सम्पद्यन्तां मम भव भवे यावदेतेपवर्गः ॥
तव पादौ मम हृदये मम हृदय तव पादद्वये लीनम्
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावत् निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥
अक्खर पयत्थ हीणं मत्ताहीणं च जं मया भणियं,
तं खमऊ णाणदेव मज्भ वि दुक्खक्खयं दिंतु ।
दुक्खक्खओ कम्मक्खओ समाहिमरणं च बोहिलाहोय,
मम होऊ जगत बंधव जिनवर तव चरणसरणेण ॥

४६२

विसर्जन पाठः

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया,
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत् प्रमादात् जिनेश्वरः।
आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनम्,
विसर्जनं नैव जानामि क्षमस्व परमेश्वरः ॥
मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च,
तत्सर्वं क्षम्यताम् देव रक्ष रक्ष जिनेश्वरः ॥
आहुता ये पुरा देवाः लब्धभागा यथाक्रमम
ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थितिम् ॥

पचंमेरु पूजा

तीर्थङ्करों के न्हवनजलतैं, भये तीरथ शर्मदा,
तातें प्रदक्षन देत सुरगन, पचंमेरन की सदा।
दो जलधि ढाई दीप में सब, गनतमूल विराजहीं,
पूजों असी जिनधाम प्रतिमा, होहि सुख, दुख भाजहीं ॥

ॐ ह्रीं श्रीपञ्चमेरुसम्बन्धि चत्यालयस्थ जिनप्रतिमा समूह। अत्र अवतर अवतर सवौंषट। अत्र तिष्ट तिष्ट ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (स्थापनम्)

सीतल मिष्ट सुवास मिलाय, जल सों पूजों श्री जिनराय,
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥

पांचों मेरु असि जिन धाम, सब प्रतिमा जी को करूं परनाम,
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धो चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो जलं० ॥
जल केसर करपूर मिलाय, गंध सों पूजों श्री जिनराय,
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पांचों मेरु असि जिन धाम, सब प्रतिमा जी को करो परनाम,
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ॐ ह्रीं पञ्चमेरु सम्बंधी चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्य चन्दनं० ।
अमल अखण्ड सुगन्ध सुहाय, अक्षत सों पूजों जिनराय,
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होये ॥
पांचों मेरु असि जिन धाम, सब प्रतिमा जी को करूं परनाम ।
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ॐ ह्रीं पञ्चमेरु सम्बन्धी चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अक्षतान निर्वपामीति स्वाहा ।
वरन अनेक रहे महकाय, फूलन सों पूजों जिनराय,
महा सुख होय, देखे नाथ मरम सुख होय ॥
पांचों मेरु असि जिन धाम, मब प्रतिमा जी को करूं परनाम,
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धो चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो पुष्पं० ।
मन वांछित बहु तुरत बनाय, चरु सों पूजों श्री जिनराय,
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥

पांचों मेरु असि जिन धाम, सब प्रतिमा जी को करूं परनाम,
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धी चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं० ।
तम हर उज्जल जोति जगाय, दीप सों पूजों श्रीजिनराय,
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पांचों मेरु असि जिन धाम, सब प्रतिमा जी को करूं परनाम,
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धी चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो दीप ० ।
खेऊं अगर परिमल अधिकाय, धूप सों पूजूं श्रीजिनराय,
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पांचों मेरु असि जिन धाम, सब प्रतिमा जी को करूं परनाम,
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धी चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो धूप० ।
सुरस सुवर्ण सुगन्ध सुभाय, फल सों पूजूं श्री जिनराय,
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पांचों मेरु असि जिन धाम सब प्रतिमा जी की करूं परनाम ।
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धी चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो फल० ।
आठ दरबमय अर्घ बनाय । द्यानत पूजूं श्री जिनराय ।
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पांचों मेरु असि जिन धाम, सब प्रतिमा जी की करूं परनाम,
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
ॐ ह्रीं पञ्चमेरु सम्बन्धी चैत्यालयस्थ जिन बिम्बेभ्यो अर्घ्यं० ।

जयमाल

प्रथम सुदर्सन स्वामि, विजय अचल मन्दिर कहा
विदूयुन माली नाम, पंचमेरु जग में प्रगट ॥१॥
प्रथम सुदर्शन मेरु विराजे, भद्र साल बन भूपर छाजे ।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन बच तन वन्दना हमारी ॥२॥
ऊपर पंच शतक पर सोहे, नन्दन वन देखत मन मोहे ।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन बच तन बंदना हमारी ॥३॥
साढे बासठ सहस उंचाई, बन सुमनस शोभे अधिकाई ।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन बच तन बंदना हमारी ॥४॥
ऊंचा जोजन सहस छतीसं, पाडुक बन सोहै गिरि सीसं ।
चैत्यालय चारों सुखकारी, मन बच तन बंदना हमारी ॥५॥
चारों मेरु समान बखाने, भूपर भद्रसाल चहुं जाने ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन बच तन बंदना हमारी ॥६॥
ऊंचे पांच शतक पर भाखे, चारों नंदन बन अभिलाखे ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन बच तन बंदना हमारी ॥७॥
साढ़े पचपन सहस उतंगा, वन सौमनस चार बहुरंगा ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन बच तन बंदना हमारी ॥८॥
ऊँचे अट्ठाइस सहस बताये, पांडुक चारों बन शुभ गाये ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मन बच तन बंदना हमारी ॥९॥
सुर नर चारन बंदन आवें, सो सोभा हम किह मुख गावें ।
चैत्यालय अस्सी सुखकारी, मन बच तन बंदना हमारी ॥१०॥

पंच मेरु की आरती, पढ़ै सुने जो कोय।
द्यानत फल जाने प्रभू, तुरत महा सुख होय ॥ ११ ॥
ॐ ह्रीं पचमेरु सम्बन्धिचैत्यालयस्थ जिनविम्बेभ्य अर्घ्यं० ।
("ॐ ह्रीं पंचमेरु चैत्यालयस्थ जिनविम्बेभ्य: नम." जप
१०८ या ६)

श्री नन्दीश्वर पूजा

सरब परब में बड़ो अठाई परब है,
नंदीश्वर सुर जाहिं लेय बसु दरब है।
हमें सकति जो नाहि इहां करि थापना।
पूजों जिनग्रह प्रतिमा, है हित आपना।

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपेद्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिन प्रतिमा समूह, अत्र अवतर अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ॥ (इति स्थापनम्)

कंचन मणिमय भृंगार, तीरथ नीर भरा,
तिहुँ धार दयी, निरवार, जन्मन मरन जरा।
नंदीश्वर श्री जिनधाम, बावन पुंज करो,
वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद भाव धरो॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वर द्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्या (इतना मंत्र प्रत्येक अष्टक के अन्तमें बोलना चाहिए) जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीतिस्वाहा॥

भव तप हर शीतलवास, सो चंदन माहीं।
प्रभु यह गुन कीजे सांच, आयो तुम ठाहीं॥

नंदीश्वर श्री निज धाम, बावन पुंज करो ।

वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद भाव धरो ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे सोहैं ।

सब जीते अक्ष समाज, तुम सम अरु कोहैं ॥

नंदीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पुंज करो ।

वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद भाव धरो ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्० ॥

तुम काम विनाशक देव. ध्याऊँ फूलन सौं ।

लहि शील लक्ष्मी एव, छूटूँ सूलन सौं ॥

नंदीश्वर श्री जिनधाम, बावन पुंज करो ।

वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद भाव धरो ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं० ।

नेवज इंद्रिय बलकार, सो तुमने चूरा ।

चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा ॥

नंदीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पुंज करो ।

वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद भाव धरो ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं० ॥

दीपक की ज्योति प्रकाश, तुम तन माँहि लसे।
टूटे करमन की राशि, ज्ञान कणी दरसे ॥
नंदीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पुंज करो।
वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद भाव धरो ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिन प्रतिमाभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं० ॥

कृष्णागरु धूप सुवास, दशदिशि नारि वरे।
अति हरष भाव परकाश, मानों नृत्य करे ॥
नंदीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पुंज करो।
वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद भाव धरो ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिन प्रतिमाभ्यो अष्ट कर्म दहनाय धूप० ॥

बहु विध फल ले तिहुँकाल, आनंद राचत है।
तुम शिव फल देहु दयाल, तो हम जाचत हैं ॥
नंदीश्वर श्री-जिन-धाम, बावन पुंज करो।
वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद भाव धरो ॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिन प्रतिमाभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फल० ॥

यह अरघ कियो निज हेतु, तुमको अरपत हूं।
'द्यानत' कीनो शिवखेत, भूपै समरपत हूं ॥
नंदीश्वर श्री-जिन-धाम, बावन पुंज करो।
वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंद भाव धरो ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यो अनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं० ॥

कार्तिक फागुन साढ़ के, अंत आठ दिन माँहिं।
नंदीश्वर सुर जात हैं, हम पूजैं इह ठाहिं ॥१॥

एक सौ त्रेसठ कोडि जोजन महा।
लाख चौरासिया एक दिश में लहा॥
आठवों द्वीप नंदीश्वरं भास्वरं ।
भवन बावन्न प्रतिमा नमो सुखकरं ॥२॥

चार दिशि चार अंजन गिरिं राजहीं।
सहस चौरासिया एक दिश छाजहीं॥
ढोल सम गोल ऊपर तले सुंदरं।
भवन बावन्न प्रतिमा नमो सुखकरं ॥३॥

एक एक चार दिशि चार शुभ बावरी।
एक एक लाख जोजन अमल जल भरी।
चहुं दिशा चार बन लाख जोजन वरं।
भवन बावन्न प्रतिमा नमो सुखकरं ॥४॥

सोल वापीन मधि सोल गिरि दधिमुखं।
सहस दश महा जोजन लखत ही सुखं॥
बावरी कोन दो माहिं दो रतिकरं।
भवन बावन्न प्रतिमा नमो सुखकरं ॥५॥

शैल बतीस इक सहस जोजन कहे ।
चार सोलै मिलै सर्व बावन लहै ॥
एक एक सीस पर एक जिन मंदिरं ।
भवन बावन्न प्रतिमा नमो सुखकरं ॥६॥
बिंब आठ एक सौ रतनमई सोहही ।
देव देवी सनगन मन मोहही ॥
पाच सै धनुष तन पद्म आसन परं ।
भवन बावन्न प्रतिमा नमो सुखकरं ॥७॥
लाल नख मुख नयन स्याम अरु स्वेत है ।
स्याम रंग भौंह सिर केश छबि देत हैं ॥
बचन बोलत मनों हंसत कालुष हरं ।
भवन बावन्न प्रतिमा नमो सुखकरं ॥८॥
कोटि शशि भानुदुति तेज छिप जात है ।
महा वैराग परिणाम ठहरात है ॥
बयन नहीं कहैं लखि होत सम्यकधरं ।
भवन बावन्न प्रतिमा नमो सुखकरं ॥९॥
नंदीश्वर जिन धाम, प्रतिमा महिमा को कहै ॥
'द्यानत' लीनों नाम यही भगति सब सुख करै ॥१०॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमाभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा: ।

———

सोलह कारण पूजा

सोलह कारण भाय जे तीर्थंकर भये ।
हरषे इन्द्र अपार मेरु पै ले गये ॥
पूजा करि निज धन्य लख्यो बहु चाव सों ।
हमहूँ षोडशकारण भावैं भाव सों ॥१॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणानि ! अत्र अवतर अवतर सवौषट । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ. ठ । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् । (स्थापनम्)

कंचनझारी निर्मल नीर पूजूं जिनवर गुणगंभीर ।
परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥१॥
दर्श विशुद्ध भावना भाय । सोलह तीर्थंकर पदपाय ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणेभ्यो जन्ममृत्यु विनाशाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

चंदन घसूं कपूर मिलाय, पूजूं श्री जिनवर के पाय ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥
दर्श विशुद्धि भावना भाय । सोलह तीर्थंकर पदपाय ।
परम गुरू हो, जय जय नाथ परम गुरू हो ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणेभ्या चन्दन ॥

तन्दुल धवल सुगन्ध अनूप । पूजूं जिनवर तिहूँ जगभूप ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥

दर्श विशुद्धि भावना भाय । सोलह तीर्थंकर पदपाय ।
परम गुरू हो, जय जय नाथ परम गुरू हो ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यो अक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

फूल सुगन्ध मधुप गुंजार । पूजूं जिनवर जगदाधार ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दर्शविशुद्धि भावना भाय । सोलह तीर्थंकर पदपाय ।
परम गुरू हो, जय जय नाथ परम गुरू हो ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोड़शकारणेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

सदनेवज बहुविध पकवान । पूजूं श्रीजिनवर गुणखान ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दर्शविशुद्धि भावना भाय । सोलह तीर्थंकर पदपाय ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरू हो ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्य. क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ।

दीपक जेति तिमिर छयकार । पूजूं श्री जिन केवलधार ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दर्शविशुद्धि भावना भाय । सोलह तीर्थंकर पदपाय ।
परम गुरू हो, जय जय नाथ परम गुरू हो ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अगर कपूर गन्ध शुभ लेय, श्री जिनवर आगे महकेय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दर्शविशुद्धि भावना भाय। सोलह तीर्थंकर पदपाय।
परम गुरू हो, जय जय नाथ परम गुरू हो ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यो अष्ट कर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री फल आदि बहुत फल सार, पूजूं जिन वांछित दातार।
परम गुरु हो जय जय नाथ, परम गुरु हो ॥
दर्शविशुद्धि भावना भाय। सोलह तीर्थंकर पदपाय।
परम गुरू हो, जय जय नाथ परम गुरू हो ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोड़शकारणेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल आठों दरब चढ़ाय। 'द्यानत' बरत करो मनलाय
परम गुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दर्शविशुद्धि भावना भाय। सोलह तीर्थंकर पदपाय।
परम गुरू हो, जय जय नाथ परम गुरू हो ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादि षोडशकारणेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

षोड़श कारण गुण करै, हरै चतुरगति वास।
पाप पुण्य सब नाश कै, ज्ञान भान परकास ॥१॥

दर्शविशुद्धि धरै जो कोई। ताको आवागमन न होई ॥
विनय महा धारे जो प्रानी। शिव वनिता की सखी बखानी ॥

शील सदा दिढ़ जो नर पाले । सो औरन की आपद टाले ॥
ज्ञानाभ्यास करे मनमाहीं । ताके मोहमहातम नाहीं ॥
जो संवेग भाव विस्तारे । सुरग मुकति पद आप निहारे ॥
दान देय मन हरष विशेखे । इह भव जस परभव सुख देखे ॥
जो तप तपे खपे अभिलाषा । चूरे करम शिखर गुरु भाषा ॥
साधु समाधि सदा मन लावे । तिहुँ जग भोग भोगि शिव जावे ॥
निशदिन वैयावृत्य करैया । सो निहचै भवनीर तिरैया ॥
जो अरहन्त भगत मन आने । सो जन विषय कषाय न जाने ॥
जो आचरज भगति करे है । सो निर्मल आचार धरे है ॥
बहुश्रुतवंत भगति जो करई । सो नर सम्पूर्ण श्रुत धरई ॥
प्रवचन भगति करे जो ज्ञाता । लहै ज्ञान परमानंद दाता ॥
षट आवश्य काल जो साधे । सो ही रतनत्रय आराधे ॥
धरम प्रभाव करे जे ज्ञानी । तिन शिवमारग रीति पिछानी ॥
वात्सल अङ्ग सदा जो ध्यावे । सो तीर्थंकर पदवी पावे ॥

यहही सोलह भावना, सहित धरे व्रत जोय ।
देव इन्द्र नर वन्द्यपद, द्यानत शिव पद होय ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धादि षोडशकारणेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

("ॐ दर्शन विशुद्धयादि षोडशकारणेभ्यो नमः" की १०८ या ९ जप करना)

दशलक्षणधर्म पूजा

उत्तम क्षमा मारदव आरजव भाव हैं ।
सत्य शौच संयम तप त्याग उपाय हैं ॥
आकिञ्चन ब्रह्मचरज धरम दश सार हैं ।
चहुँगति दुखतें काढ़ मुकत करतार हैं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्म ! अत्र अवतर अवतर ! संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

हेमाचल की धार, मुनिचित सम शीतल सुरभि ।
भव आताप निवार, दशलक्षन पूजूं सदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्माय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा ।
भव आताप निवार, दशलक्षन पूजूं सदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्माय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अमल अखंडित सार, तन्दुल चन्द्र समान शुभ ।
भव आताप निवार, दशलक्षन पूजूं सदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्माय अक्षतान निर्वपामीति स्वाहा ।

फूल अनेक प्रकार, महकें उरधलोक लों ।
भव आताप निवार, दशलक्षन पूजूं सदा ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्माय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

नेवज विविध प्रकार, उत्तम षटरस संजुगत।
भव आताप निवार, दशलच्छन पूजूं सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्माय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
बाति कपूर सुधार, दीपक जोति सुहावनी।
भव आताप निवार, दशलच्छन पूजूं सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्माय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगन्धता।
भव आताप निवार, दशलच्छन पूजूं सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
फल की जाति अपार, घ्राण नयन मन मोहने।
भव आताप निवार, दशलच्छन पूजूं सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्माय फलं निर्वपामीति स्वाहा।
आठों दरब संभार, 'द्यानत' अधिक उछाह सों।
भव आताप निवार, दशलच्छन पूजूं सदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्माय अर्घ्यंनिर्वपामीति स्वाहा।

पीड़ैं दुष्ट अनेक, बांध मार बहु बिधि करें।
धरिये छमा विवेक, कोप न कीजे प्रीतमा ॥

उत्तम छमा गहो रे भाई, इह भव जस, परभव सुखदाई।
गाली सुनि मन खेद न आनो, गुन को औगुन कहै अयानो ॥
कहि है अयानो वस्तु छीने, बांध मार बहुविधि करें।
घर तें निकारें तन विदारें, बैर जो न तहाँ धरें ॥

जे करम पूरब किये खोटे, सहे क्यों नहीं जीयरा ।
अति क्रोध अग्नि बुझाय प्रानी, साम्य जल ले सीयरा ॥
ॐ ह्रीं उत्तमक्षमा धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥
मान महा विष रूप करहिं, नीच गति जगत में ।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावे प्राणी सदा ॥
उत्तम मार्दव गुण मन माना, मान करन को कौन ठिकाना ।
वस्यो निगोद माहिं ते आया, दमरी रुकन भाग बिकाया ॥
रुकन बिकाया भागवशतैं, देव एक इन्द्री भया ।
उत्तम मुआ चाण्डाल हूआ, भूप कीड़ों में गया ॥
जीतव्य जोबन धन गुमान, कहा करे जलबुदबुदा ।
करि विनय बहु विधि बडे जन की, ज्ञान का पावे उदा ॥
ॐ ह्रीं उत्तम मार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥
कपट न कीजे कोय, चोरन के पुर ना बसे ।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु सम्पदा ॥
उत्तम आर्जव रीति बखानी, रंचक दगा बहुत दुखदानी ।
मन में हो सो बचन उचरिये, बचन होय सों तन सौं करिये ॥
करिये सरल तिहुँ जोग अपने, देख निरमल आरसी ।
मुख करै जैसा लखे तैसा, कपट प्रीति अगारसी ॥
नहिं लहे लछमी अधिक छल कर करमबंध विशेषता ।
भय त्याग दूध बिलाव पीवे, आपदा नहिं देखता ॥
ॐ ह्रीं उत्तमार्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

धर हिरदय संतोष, करहु तपस्या देह सों।
शौच सदा निरदोष, धरम बड़ो संसार में ॥
उत्तम शौच सर्व जग जाना, लोभ पाप का बाप बखाना।
आसाफांस महा दुखदानी, सुख पावे संतोषी प्रानी ॥
प्रानी सदा शुचि शील जप तप, ज्ञान ध्यान प्रभाव तैं।
गंग जमुन समुद्र न्हाये, अशुचि दोष सुभाव तै।
ऊपर अमल मल भरयो भीतर, कौन बिधि घट शुचि कहै ॥
बहु देह मैली सुगुन थैली शौच गुन साधू लहै ॥
ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

कठिन बचन मत बोल, परनिन्दा अरु झूठ तज।
सांच जवाहर खोल, सतवादी जग में सुखी ॥
उत्तमसत्य बरत पा लीजे, पर विश्वासघात नहिं कीजे।
सांचे झूठे मानुष देखे, आपन पूत स्वपास न पेखे ॥
पेखे तिहा यत पुरुष साचे को दरब सब दीजिए।
मुनिराज श्रावक की प्रतिष्ठा, साचगुण लख लीजिए।
ऊँचे सिंहासन बैठ वसुनृप, धरम का भूपति भया।
वच झूठ सेती नरक पहुँचा सुरग में नारद गया ॥
ॐ ह्रीं उत्तम सत्य धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्री मन वश करो।
संयम रतन संभाल विषय चोर बहु फिरत हैं ॥

उत्तम संजम गहु मन मेरे, भव भव के भाजैं अघ तेरे ।
सुरग नरक पशुगति में नाहीं, आलस हरन करन सुखठाहीं ॥
ठाहीं पृथवी जल आग मारुत, रुख त्रस करुना धरो ।
स्पर्शन रसना घ्रान नैना, कान मन सब वश करो ॥
जिस बिना नहीं जिन राज सीझैं, तू रुल्यो भव कीच में ।
इक घरी मत विसरो करो नित, आव जम मुख बीच में ॥
ॐ ह्रीं उत्तमसंयम धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

तप चाहें सुरराय, करम शिखर को वज्र है ।
द्वादश विधि सुखदाय, क्यों न करे निज सकति सम ॥

उत्तम तप सब माहिं बखाना, करम शिखर को वज्र समाना।
बस्यो अनादि निगोद मँझारा. भू विकलत्रय पशु तन धारा॥
धारा मनुष तन महा दुर्लभ, सुकुल आयु निरोगता ।
श्रीजैनवानी तत्वज्ञानी भई विषम पयोगता ॥
अति महा दुरलभ, त्याग विषय-कषाय, जो तप आदरें ।
नरभव अनूपम कनक घर पर, मणिमयी कलसा धरें ॥
ॐ ह्रीं उत्तमतप धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

दान चार प्रकार, चार संघ को दीजिये ।
धन बिजुली उनहार नरभव लाहा लीजिये ॥

उत्तम त्याग कह्यो जग सारा, औषधि शास्त्र अभय आहारा ।
निहचै रागद्वेष निरवारे, ज्ञाता दोनों दान संभारे ॥
दोनों संभारे कूप, जल सम, दरब घर में परनया ।
निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाया खोया बह गया ॥

धनि साध शास्त्र अभय दिवैया, त्याग राग विरोध को ।
बिन दान श्रवक साधु दोनों, लहैं नाहीं बोध को ॥

ॐ ह्रीं उत्तमत्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

परिग्रह चौबीस भेद, त्याग करें मुनिराज जी ।
तृष्णा भाव उछेद, घटती जान घटाइये ॥

उत्तम आकिंचन गुण जानो, परिग्रह चिन्ता दुख ही मानो ।
फांस तनक सी तनमें साले, चाह लंगोटी की दुःख भाले ॥
भाले न समता सुख कभी नर, बिना मुनि मुद्रा धरे ।
धनि, नगन पर, तन नगन ठाढे, सुर असुर पायन परे ॥
घरमाहिं तृष्णा जो घटावे रुचि नहीं संसार सों ।
बहु धन बुरा हू भला कहिये, लीन पर उपकार सों ॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चिन्य धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

शील वाढ़ि नव राख, ब्रह्मभाव अंतर लखो ।
करि दोनों अभिलाख, करहिं सफल नरभव सदा ॥

उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनो । माता बहिन सुता पहिचानो ।
सहैं बान वरषा बहु सूरे । टिके न नैनबान लखि कूरे ॥
कूरे त्रिया के अशुचि तन में, काम रोगी रति करें ।
बहु मृतक सडहिं, मसान मांहिं, काक ज्यों चोंचें भरें ॥
संसार में विषबेल नारी तज गये योगीश्वरा ।
द्यानत धरम दश पैंड चढ़ के शिवमहल में पग धरा ॥१०॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चिन्य ब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जयमाला

दश लच्छण बंदों सदा, मन वांछित फलदाय ।
कहों आरती भारती, हम पर होहु सहाय ॥१॥
उत्तम छमा जहाँ मन होई, अंतर बाहर शत्रु न कोई ।
उत्तम मार्दव बिनय प्रकासे । नाना भेद ज्ञान सब भासे ॥२॥
उत्तम आर्जव कपट मिटावे । दुरगति त्याग सुगति उपजावे ।
उत्तम शौच लोभ परिहारी । संतोषी गुन रतन भँडारी ॥३॥
उत्तम सत्य वचन मुख बोले । सो प्रानी संसार न डोले ॥
उत्तम संयम पाले ज्ञाता । नरभव सफल करे ले साता ॥४॥
उत्तम तप निर वांछित पाले । सो नर करम शत्रु को टाले ॥
उत्तम त्याग करे जो कोई । भोग भूमि-सुर-शिव सुख होई ॥५॥
उत्तम आकिंचन व्रतधारे । परम समाधि दशा बिसतारे ॥
उत्तम ब्रह्मचर्य मन लावे । नर सुर सहित मुकति पद पावे ॥६॥
करे कर्म की निरजरा, भव पींजरा विनाशि ।
अजर अमर पद को लहे, द्यानत सुख की राशि ॥७॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयम तपत्याग आकिंचन ब्रह्मचर्य दशलक्षणधर्माय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

रत्नत्रय पूजा

चहुं गति-फनिविष-हरन-मणि, दुख-पोपक जलधार ।
शिव-सुख सदा सरोवरी, सम्यक त्रयी निहार ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अत्र अवतर अवतर संवौषट । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव, वषट् । (स्थापनम्)

क्षीरोदधि उनहार, उज्जल जल अति सोहना ।
जनम रोग निरवार, सम्यक रत्नत्रय भजो ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय जन्म रोग विनाशाय जल निर्व० ॥१॥

चन्दन केशर गार, परिमल महा सुरंग मय ।
जनम रोग निरवार, सम्यक रत्नत्रय भजो ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय भवाताप विनाशनाय चन्दन० ॥२॥

तंदुल अमल विचार, वासमती सुखदास के ।
जनम रोग निरवार, सम्यक रत्नत्रय भजो ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतान्० ॥३॥

महके फूल अपार, अलि गुंजें ज्यों थुति करें ।
जनम रोग निरवार, सम्यक रत्नत्रय भजो ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय कामबाण विध्वंसनाय पुष्प० ॥४॥

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगन्धयुत ।
जनम रोग निरवार, सम्यक रत्नत्रय भजो ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यम्० ॥५॥

दीप रतनमय सार, ज्योति प्रकाशे जगत में ।
जनम रोग निरवार, सम्यक रत्नत्रय भजो ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहांधकार विनाशनाय दीप० ॥६॥

धूप सुवास विचार, चन्दन अगर कपूर की ।

जनम रोग निरवार, सम्यक रत्नत्रय भजो ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूप० ॥७॥

फल शोभा अधिकार, लौंग छुहारे जायफल ।

जनम रोग निरवार, सम्यक रत्नत्रय भजो ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफल प्राप्तये फल० ॥८॥

आठ दरब निरधार, उत्तम सों उत्तम लिये ।

जनम रोग निरवार, सम्यक रत्नत्रय भजो ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं० ॥९॥

सम्यक दरसन ज्ञान, व्रत शिवमग तीनों मयी ।

पार उतारन जान, 'द्यानत' पूजूं व्रत सहित ॥१०॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दर्शन पूजा

सिद्ध अष्ट गुण मय प्रकट, मुक्त जीव सोपना ।

जिह बिन ज्ञान चरित अफल, सम्यक दर्श प्रधान ॥

ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन । अत्र अवतर अवतर संवौषट । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठ । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट ।

(स्थापनं)

नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरे मल क्षय करे।
सम्यक दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥
जल केसर घनसार, ताप हरे सीतल करे।
सम्यक दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥
अक्षत अनूप निहार, दारिद नाशे सुख करे।
सम्यक दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय अक्षतान निर्वपामीति स्वाहा।
पहुप सुवास उदार, खेद हरे मन शुचि करे।
सम्यक दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा
नेवज विविध प्रकार, क्षुधा हरे थिरता करे।
सम्यक दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा
दीप ज्योति तमहार घटपट परकाशे महा।
सम्यक दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा
धूप घ्रान सुखकार, राग विघन जडता हरे।
सम्यक दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुरशिव फल करें।
सम्यक दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टांग सम्यग्दर्शनाय फल निर्वपामीति स्वाहा।
जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु।
सम्यक दर्शन सार, आठ अंग पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टाग सम्यग्दर्शनाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥ ९ ॥

जयमाल

आप आप निहचै लखे तत्व प्रीति व्योहार।
रहितदोष पच्चीस हैं सहित अष्ट गुनसार ॥१॥
सम्यक दरसन रतन गहीजे। जिनवच में सन्देह न कीजे।
इह भव विभव चाह दुखदानी। परभव भोग चहे मत प्रानी ॥२॥
प्रानी गिलान न करि अशुचि लखि, धरम गुरु प्रभु परखिये।
परदोष ढकिये, धरम डिगते को सुथिर कर हरषिये ॥३॥
चहु संघ को वात्सल्य कीजे, धरम की परभावना।
गुन आठसों गुन आठ लहिके इहां फेर न आवना ॥४॥
ॐ ह्रीं अष्टाग सहिताय पञ्चविंशतिदोषरहिताय सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ॥

ज्ञान पूजा

पंच भेद जाके प्रकट, ज्ञेय प्रकाशन भान।
मोह तपन हर चन्द्रमा, सोई सम्यक्ज्ञान ॥

ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यक्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठ । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट । (स्थापनं)

नीर सुगन्ध अपार, त्रिषा हरे मल क्षय करे ।
सम्यकज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ॥
ॐ ह्री अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

जल केसर घनसार, ताप हरे शीतल करे ।
सम्यक ज्ञान विचार आठ भेद पूजों सदा ॥
ॐ ह्री अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षत अनुप निहार, दारिद नाशे सुख करे ।
सम्यक ज्ञान विचार आठ भेद पूजों सदा ॥
ॐ ह्री अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पहुप सुवास उदार, खेद हरे मन शुचि रे ।
सम्यक ज्ञान विचार आठ भेद पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।

नेवज विविध प्रकार, क्षुधा हरे थिरता करे ।
सम्यक ज्ञान विचार आठ भेद पूजों सदा ॥
ॐ ह्री अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दीप ज्योति तमहार, घट पट परकाशे महा ।
सम्यक ज्ञान विचार आठ भेद पूजों सदा ॥
ॐ ह्री अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप घ्रान सुखकार, रोग विघ्न जड़ता हरे ।
सम्यक ज्ञान विचार आठ भेद पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल आदि विथार, निहचे सुर शिव फल करे।
सम्यक ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय फल निर्वपामीति स्वाहा।
जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु।
सम्यक ज्ञान विचार आठ भेद पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाल

आप आप जाने नियत, ग्रंथ पठन व्योहार।
संशय बिभ्रम मोह बिन, अष्ट अंग गुनकार ॥१॥
सम्यक ज्ञान रतन मन भाया। आगम तीजा नैन बताया।
अक्षर शुद्ध अरथ पहिचानो। अक्षर अरथ उभय संग जानो॥
जानो सुकाल पठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये।
तपरीति गहि बहु मान दे के, विनय गुन चित लाइये ॥
यह आठ भेद, करम उछेदक, ज्ञान दर्पन देखना ॥
इस ज्ञानही सों भरत सीझा, और सब पट पेखना ॥३॥
ॐ ह्रीं अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चारित्र पूजा

विषय रोग औषध महा, दव कषाय जलधार।
तीर्थंकर जाको धरे, सम्यक् चारित सार ॥१॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविध सम्यक् चारित्र ! अत्र अवतर अवतर। सवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ. ठ। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (स्थापनम्)

नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरे मल क्षय करे ।
सम्यक चारित सार, तेरह विधि पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्‌चारित्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल केसर घनसार, ताप हरे शीतल करे ।
सम्यक चारित सार, तेरह विधि पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्‌चारित्राय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षत अनूप निहार, दारिद नाशे सुख भरे ।
सम्यक चारित सार, तेरह विधि पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविध सम्यक्‌चारित्राय अक्षतान्‌ निर्वपामीति स्वाहा ।

पुष्प सुवास उदार, खेद हरे मन शुचि करे ।
सम्यक चारित सार, तेरह विधि पूजों सदा ॥
ॐ त्रयोदशविध सम्यक्‌चारित्राय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।

नेवज विविध प्रकार, क्षुधा हरे थिरता करे ।
सम्यक चारित सार, तेरह विधि पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविध सम्यक्‌चारित्राय नैवेद्यम्‌ निर्वपामीतिस्वाहा ।

दीप ज्योति तम हार, घट पट परकाशे महा ।
सम्यक चारित सार, तेरह विधि पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्‌चारित्राय दीपम्‌ निर्वपामीति स्वाहा ।

धूप घ्रान सुखकार, रोग विघन जड़ता हरे ।
सम्यक चारित सार, तेरह विधि पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्‌चारित्रायधूपम्‌ निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल आदि विथार, निहचे सुर शिवफल करे।
सम्यक चारित सार, तेरह विधि पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक् चारित्रायफल निर्वपामीति स्वाहा।
जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु।
सम्यक चारित सार, तेरह विधि पूजों सदा ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक् चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीतिस्वाहा।

जयमाल

आप आप थिर नियत नय, तप संजम व्योहार।
स्वपर दया दोनों लिये, तेरह विध दुखहार ॥१॥
सम्यक चारित्र रतन संभालो। पांच पाप तजि के व्रत पालो।
पंच समिति त्रय गुपति गहीजे। नरभव सफल करहु तन छीजे॥
छीजे सदा तनकों जतन यह, एक संजम पालिये।
बहु रुल्यो नरक निगोद मांहि, कषाय विषयनि टालिये॥
शुभ करम जोग सुघाट आया, पार हो दिन जात है
'द्यानत' धरम की नाव बैठो, शिवपुरी कुशलात है ॥२॥
ॐ ह्रीं त्रयोदश विधि सम्यक्चारित्राय महार्घ्यं०।

समुच्चय जयमाल

सम्यक दरशन ज्ञान व्रत, इन बिन मुकत न होय।
अंध पंगु अरु आलसी, जुदे जले दव लोय ॥१॥
तापे ध्यान सुथिर बन आवे। ताके करमबंध कट जावे॥
तासों शिवतिय प्रीति बढ़ावे। जो सम्यक रत्नत्रय ध्यावे ॥२॥

ताको चहुँगति के दुख नाहीं। सो न परे भवसागर मांही ॥
जनम जरा मृतु दोष मिटावे। जो सम्यक रत्नत्रय ध्यावे ॥३॥
सोई दशलक्षण को साधे। सो सोलह कारण आराधे ॥
सो परमातम पद उपजावे। जो सम्यक रत्नत्रय ध्यावे ॥४॥
सोई शक्रचक्र पदलेई। तीन लोक के सुख विलसेई ॥
सो रागादिक भाव बहावे। जो सम्यक रत्नत्रय ध्यावे ॥५॥
सोई लोकालोक निहारे। परमानंद दशा विसतारे ॥
आप तिरे औरन तिरवावे। जो सम्यक रत्नत्रय ध्यावे ॥६॥

एक स्वरूप प्रकाश निज, बचन कह्यो नहि जाय।
तीन भेद व्योहार सब, द्यानत को सुखदाय ॥७॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय महार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा,

स्वयंभू स्तोत्र भाषा

चौपाई

राज विषै जुगलनि[1] सुख किया, राजत्याग भवि[2] शिवपद लिया।
स्वयंबोध स्वंभू भगवान्, बंदों आदिनाथ गुणखान ॥१॥
इंद्र क्षीर सागर जल लाय, मेरु न्हवाये गाय बजाय।
मदन विनाशक सुख करतार, बंदों अजितअजित पदकार ॥२॥
शुक्ल ध्यान करि करम विनाशि, घातिअघातिसकलदुखराशि।
लह्यो मुकतिपद सुखअविकार, बंदौ संभव भव दुख टार ॥३॥

---

(१) जुगजुग, हजारों बरस।
(२) अच्छा।

माता पच्छिम रयन मंझार, सुपने सोलह देखे सार।
भूप पूछि फल सुनि हरषाय, बंदों अभिनन्दन मन लाय ॥४॥
सब कुवादवादी सरदार, जीते स्यादवाद धुनि धार।
जैनधरम परकाशक स्वामि, सुमति देव पदकरहुं प्रनामि ॥५॥
गर्भ अगाऊ धनपति आय, करी नगर शोभा अधिकाय।
बरसे रतन पञ्च-दश मास, नमों पद्मप्रभू सुख की रास ॥६॥
इन्द्र फनिन्द्र नरिन्द्र त्रिकाल, बानी सुनिसुनि होहिं खुशहाल।
द्वादश सभा ज्ञान दातार, नमों सुपारसनाथ निहार ॥७॥
सुगुन छियालिस हैं तुम माहिं, दोष अठारह कोई नाहिं।
मोह महातम नाशक दीप, नमों चन्द्रप्रभू राख समीप ॥८॥
द्वादश विध तप करम विनाशि, तेरह भेद चरित परकाश।
निज अनिच्छ भवइच्छ करान, बंदों पहुपदंत मन आन ॥९॥
भवि सुखदाय सुरगतें आय, दशविध धरम कहो जिनराय।
आप समान सबनि सुख देह, वंदों शीतल धर्म स्नेह ॥१०॥
समता सुधा कोप-विष नास, द्वादशांग बानी परकास।
चारसंघ आनन्द दातार, नमों श्रेयांस जिनेश्वर सार ॥११॥
रत्नत्रय सिर मुकुट विशाल, शोभे कंठ सुगुण मणिमाल।
मुक्तिनार भरता भगवान, वासुपूज्य बंदों धर ध्यान ॥१२॥
परम समाधि सरूप जिनेश, ज्ञानी ध्यानी हित उपदेश।
कर्मनाशि शिव सुख बिलसंत, बंदों विमलनाथ भगवंत ॥१३॥

अंतर बाहर परिग्रह टार, परम दिगंबर व्रतको धार।
सर्व जीव हित राह दिखाय, नमों अनंत वचन मन काय॥१४॥
सात तत्व पंचास्तिकाय, नव पदार्थ छह द्रव्य सुभाय।
लोक अलोक सकल परकाश, वंदों धर्मनाथ अविनाश॥१५॥
पञ्चम चक्रवर्ति निधिभोग, कामदेव द्वादशम मनोग।
शांति करन सोलम जिनराय, शान्तिनाथ वंदों हरषाय॥१६॥
बहु थुति करें हर्ष नहि होय, निंदे दोष गहे नहिं कोय।
शीलवान परब्रह्मस्वरूप, वंदों कुंथनाथ शिव भूप॥१७॥
द्वादशगण पूजें सुखदाय, थुति वंदना करें अधिकाय।
जाकी निजथुति कबहुं न होय, वन्दों अरजिनवर पद दोय॥१८॥
परभव रत्नत्रय अनुराग, इस भव ब्याह समय वैराग।
बालब्रह्म पूरन व्रतधार, वन्दों मल्लिनाथ जिनसार॥१९॥
बिन उपदेश स्वयं वैराग, थुति लौकांत करें पग लाग।
नमः सिद्ध कहि सब व्रत लेंहि, वंदों मुनिसुव्रत व्रत देंहि॥२०॥
श्रावक विद्यावंत निहार, भगति भाव से दिया अहार।
बरसे रतनराशि तत्काल, वंदों नमिप्रभु दीनदयाल॥२१॥
सब जीवन की बंदी छोड़, रागदोश दोऊ बंधन तोड़।
रजमति तज शिवतियसों मिले, नेमिनाथ वंदों सुखानिले॥२२॥
दैत्य कियो उपसर्ग अपार, ध्यान देख आयो फणिधार।
गयो कमठ शठ मुख कर श्याम, नमों मेरुसम पारस स्वामि॥२३॥

भवसागर से जीव अपार । धरमपोत में धरे निहार
डूबत काढ़े दया विचार । वर्द्धमान बंदो बहु बार ।२४

दोहा

चौबीसों पद कमल जुग, बंदो मन वच काय ।
"द्यानत" पढ़ें सुने सदा, सो प्रभू क्यों न सहाय ॥

मेरी भावना

जिसने रागद्वेष कामादिक जीते, सब जग जान लिया ।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया ॥१॥
बुद्ध वीर जिन हरि हर ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो ।
भक्तिभाव से प्रेरित हो, यह चित्त उसी में लीन रहो ॥२॥
विषयों की आशा नहि जिनके, साम्यभाव धन रखते हैं ।
निजपर के हित साधन में जो, निशदिन तत्पर रहते हैं ॥३॥
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं ।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुःख समूह को हरते हैं ॥४॥
रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे ।
उन्हीं जैसी चर्या में, यह चित्त सदा अनुरक्त रहे ॥५॥
नहीं सताऊँ किसी जीव को, झूठ कभी नहिं कहा करूँ ।
परधन बनिता पर न लुभाऊं, संतोषामृत पिया करूँ ॥६॥
अहंकार का भाव न रक्खूं, नहीं किसी पर क्रोध करूँ ।
देख दूसरों की बढ़ती को, कभी न ईर्ष्या भाव धरूँ ॥७॥

रहे भावना ऐसी मेरी, सरल सत्य व्यवहार करूं ।
बने जहाँ तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूं ॥ ८ ॥
मैत्री भाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे ।
दीन दुःखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा स्रोत बहे ॥ ९ ॥
दुर्जन क्रूर कुमार्गरतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे ।
साम्यभाव रक्खूं मैं उन पर, ऐसी परणति हो जावे ॥१०॥
गुणीजनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड़ आवे ।
बने जहाँ तक उनकी सेवा करके, यह मन सुख पावे ॥११॥
होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे ।
गुण ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ॥१२॥
कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे ।
लाखों वर्षों तक जीऊँ, या मृत्यु आज ही आजावे ॥१३॥
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे ।
तौ भी न्याय मार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे ॥१४॥
होकर सुख में मग्न न फूले, दुःख में कभी न घबरावे ।
पर्वत नदी श्मशान भयानक, अटवी से नहीं भय खावे ॥१५॥
रहे अडोल अकंप निरंतर, यह मन दृढ़तर बन जावे ।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग में, सहनशीलता दिखलावे ॥१६॥
सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे ।
बैर पाप अभिमान छोड़, जग नित्य नये मङ्गल गावे ॥१७॥

घर घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुस्कर हो जावें ।
ज्ञान चरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्म फल सब पावें ॥१८॥
ईति भीति व्यापे नहीं जग में, वृष्टि समय पर हुआ करे ।
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे ॥१९॥
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे ।
परम अहिंसा धर्म जगत् में, फैल सर्वहित किया करे ॥२०॥
फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे ।
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहिं, कोई मुख से कहा करे ॥२१॥
बन कर सब युग वीर हृदय से, धर्मोन्नति रत रहा करें ।
वस्तु स्वरूप बिचार खुशी से, सब दुःख संकट सहा करें ॥२२॥
(तथास्तु)

स्तुति

प्रभु पतित पावन, मैं अपावन, चरन आयो शरण जी ।
यह विरद आप निहार स्वामी, मेट जन्मन मरन जी ॥
तुम ना पिछाना, आन माना, देव विविध प्रकार जी ।
या बुद्धि सेती निज न जाना, भ्रम गिना हितकार जी ॥१॥
भव विकट बन में करम वैरी, ज्ञान धन मेरो हरो ।
मैं इष्ट भूलो, भ्रष्ट होय, अनिष्ट गति धरतो फिरो ॥

धन घड़ी यह, धन दिवस यह ही, धन जनम मेरो भयो।
अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभु को लख लयो ॥२॥
छवि वीतरागी नगन मुद्रा, दृष्टि नासा पे धरे।
वसु प्रातिहार्य अनन्त गुणयुत, कोटिरविछवि को हरे ॥
मिट गयो तिमिर मिथ्यात मेरो, उदय रवि आतम भयो।
मो उर हरष ऐसो भयो, मनु रंक चिंतामणि लयो ॥३॥
मैं हाथ जोड़, नमाय मस्तक, वीनऊँ तुम चरन जी।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनो तारनतरन जी ॥
जाचुं नहिं सुरवास पुनि, नर राज परिजन साथ जी।
बुध जाचहूँ तुम भक्ति भव भव, दीजिये शिवनाथ जी ॥४॥

जिनवाणी स्तुति

वीर हिमाचल तें निकसी, गुरु गौतम के मुख कुंड ढुरी है।
मोह महाचल भेद चली, जग की जड़ता सब दूर करी है ॥
ज्ञान पयोनिधि माहिं रली, बहु भंगतरंगन सों उछरी है।
ता शुचि शारद गंग नदी प्रति, मै अंजुलि कर शीस धरी है ॥१॥
या जगमंदिर में अनिवार, अज्ञान अंधेर छयो अति भारी।
श्री जिन की ध्वनि दीपशिखा सम जो नहिं होत प्रकाशनहारी ॥
तो किम भांति पदारथ पांति, भला लहते रहते अविचारी।
या विधि संत कहैं धनि हैं धनि हे जिन बैन बड़े उपकारी ॥२॥

बारह भावना

राजा राणा छत्रपति, हथियन के असवार ।
मरना सबको एक दिन, अपनी अपनी बार ॥१॥
दल बल देवी देवता, मात पिता परिवार ।
मरती बरियां जीव को, कोई न राखनहार ॥२॥
दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान् ।
कहीं न सुख संसार में, सब जग देखो छान ॥३॥
आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय ।
यूं कबहूं इस जीव का, साथी सगा न कोय ॥४॥
जहां देह अपनी नहीं, तहा न अपना कोय ।
घर संपति पर प्रगट हैं, पर हैं परिजन लोय ॥५॥
दिपे चाम चादर मढी, हाड़ पींजरा देह ।
भीतर यासम जगत में, और नहीं घिनगेह ॥६॥

सोरठा

मोह नींद के जोर, जगवासी घूमें सदा ।
कर्म चोर चहुं ओर, सरवस लूटें सुध नहीं ॥७॥
सतगुर देय जगाय, मोह नींद जब उपशमे ।
तब कुछ बने उपाय, कर्म चोर आवत रुके ॥८॥

दोहा

ज्ञान दीप तप तेल भर, घर सोधे भ्रम छोर ।
या विधि बिन निकसे नहीं, बैठे पूरब चोर ॥९॥

पंच महाव्रत संचरण, समिति पंच परकार।
प्रबल पंच इन्द्री विजय, धार निर्जरा सार ॥१०॥
चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संस्थान।
तामें जीव अनादि से, भरमत है बिन ज्ञान ॥११॥
याचे सुरतरु देय सुख, चिंतत चिंता रैन।
बिन याचे बिन चिंतवे, धर्म सकल सुख दैन ॥१२॥
धन कन कंचन राज सुख, सबै सुलभ कर जान।
दुर्लभ है संसार में, एक यथारथ ज्ञान ॥१३॥

वैराग्य भावना

बीज राख फल भोगवे ज्यों किसान जगमाहिं।
त्यों चक्री सुख में मगन धर्म बिसारे नाहिं ॥
इस विधि राज्य करे नरनायक भोगे पुन्य विशाल।
सुख सागर में मग्न निरन्तर जात न जाने काल ॥
एक दिवस शुभ कर्मयोग से क्षेमंकर मुनि वंदे।
देखे श्री गुरु के पद पंकज लोचन अलि आनन्दे ॥१॥
तीन प्रदक्षिणा दे सिर नायो कर पूजा स्तुति कीनी।
साधु समीप विनय कर बैठो चरणों में दृष्टि दीनी ॥
गुरु उपदेशो धर्म शिरोमणि सुन राजा वैरागो।
राज्य रमा वनितादिक जो रस सो सब नीरस लागो ॥२॥

मुनि सूरज कथनी किरणावलि लगत भर्म बुधि भागी ।
भव तन भोग स्वरूप विचारो परम धर्म अनुरागी ॥
या संसार महा वन भीतर भर्मत छोर न आवे ।
जन्मन मरन जरा यों दाहे जीव महा दुख पावे ॥३॥

कबहुंकि जाय नरक पद भुंजे छेदन भेदन भारी ।
कबहुंकि पशु पर्याय धरे तहां बध बन्धन भयकारी ॥
सुर गति में परसम्पति देखे राग उदय दुख होई ।
मानुष योनि अनेक विपति मय, सर्व सुखी नहिं कोई ॥४॥

कोई इष्ट बियोगी विलखे कोई अनिष्ट-संयोगी ।
कोई दीन दरिद्री दीखे, कोई तन का रोगी ॥
किस ही घर कलिहारी नारी, के बैरी सम भाई ।
किसही के दुख बाहर दीखे किसही उर दुचिताई ॥५॥

कोई पुत्र बिना नित झूरे होइ मरे तब रोवे ।
खोटी संतति से दुःख उपजे क्यों प्राणी सुख सोवे ॥
पुन्य उदय जिनके, तिनको भी नांहि सदा सुख साता ।
यह जग वास यथारथ दीखे सबही है दुःख दाता ॥६॥

जो संसार विषैं सुख हो तो तीर्थंकर क्यों त्यागे ।
काहे को शिव साधन करते संयम से अनुरागे ॥
देह अपावन अथिर घिनावनि, इसमें सार न कोई ।
सागर के जल से शुचि कीजे, तो भी शुद्ध न होई ॥७॥

सप्त कुधातु भरी मल मूत्र, चर्म लपेटी सोहै ।
अन्तर देखत या सम जग में, और अपावन को है ॥
नव मल द्वार स्रवैं निशि बासर, नाम लिये घिन आवे ।
व्याधि उपाधि अनेक जहाँ तहाँ, कौन सुधी सुख पावे ॥८॥

पोषत तो दुख दोष करे अति, सोषत सुख उपजावे ।
दुर्जन देह स्वभाव बराबर, मूरख प्रीति बढ़ावे ॥
राचन योग्य स्वरूप न याको, विरचन योग्य सही है ।
यह तन पाय महा तप कीजे, इसमें सार यही है ॥ ९ ॥

भोग बुरे भव रोग बढ़ावें, बैरी हैं जग जीके ।
बे रस होय विपाक समय अति, सेवत लागें नीके ॥
वज्र अगिन विष से विषधर से, हैं अधिके दुखदाई ।
धर्म रत्न को चोर प्रबल अति, दुर्गति पन्थ सहाई ॥१०॥

मोह उदय यह जीव अज्ञानी, भोग भले कर जाने ।
ज्यों कोई जन खाय धतूरा, सो सब कंचन माने ॥
ज्यों ज्यों भोग संयोग मनोहर, मन वांछित जन पावे ।
तृष्णा नागिन त्यों त्यों भंके, लहर लोभ विष लावे ॥११॥

मैं चक्री पद पाय निरन्तर, भोगे भोग घनेरे ।
तौ भी तनक भये ना पूरण, भोग मनोरथ मेरे ॥
राज समाज महाअघ कारण, बैर बढ़ावन हारा ।
वेश्या सम लक्ष्मी अति चंचल, इसका कौन पत्यारा ॥१२॥

मोह महा रिपु बैर बिचारे, जग जीव संकट डारे।
घर कारागार वनिता बेड़ी, परिजन हैं रखवारे॥
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण तप, ये जिय को हितकारी।
ये ही सार असार और सब, यह चक्री जीय धारी॥१३॥
छोड़े चौदह रत्न नवों निधि, और छोड़े संग साथी।
कोड़ि अठारह घोड़े छोड़े, चौरासी लख हाथी॥
इत्यादिक सम्पति बहुतेरी, जीरण तृणवत त्यागी।
नीति बिचार नियोगी सुत को, राज्य दिया बड़भागी॥१४॥
होई निस्सल्य अनेक नृपति संग, भूषण वसन उतारे।
श्रीगुरु चरण धरी जिन मुद्रा, पंच महा व्रत धारे॥
धन्य समझ यह बुद्धि जगोत्तम, धन्य यह धीरजधारी।
ऐसी सम्पति छोड़ बसे बन, तिन पद धोक हमारी॥१५॥

परिग्रह पोट उतार सब, लीनो चारित्र पंथ।
निज स्वभाव में स्थिर भये, वज्रनाभि निर्ग्रंथ॥

दर्शन पाठ

सकल ज्ञेय-ज्ञायक तदपि, निजानंद-रस-लीन।
सो जिनेन्द्र जयवंत नित, अरि रज रहस-विहीन॥

जय वीतराग विज्ञानपूर, जय मोहतिमिरको हरन सूर।
जय ज्ञान अनंतानंत धार, दृगसुखवीरज मंडित अपार॥१॥

जय परम शांतमुद्रा समेत, भविजनको निज अनुभूति हेत।
भविभागनवश जोगेवशाय,तुमधुनिह्वै सुनि विभ्रम नशाय॥२॥
तुम गुण चिंतत निजपर विवेक, प्रगटै, विघटैं आपद अनेक।
तुम जगभूषण दूषणवियुक्त, सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त॥३॥
अविरुद्धशुद्ध चेतन स्वरूप, परमात्म परम पावन अनूप।
शुभअशुभविभावअभावकीन,स्वाभाविकपरिणतिमयअछीन॥४॥
अष्टादश दोषविमुक्त धीर, स्वचतुष्टयमय राजत गभीर।
मुनि गणधरादि सेवत महंत, नव केवललब्धिरमा धरंत॥५॥
तुम शासनसेय अमेय जीव, शिव गये जांहि जैहैं सदीव।
भवसागर में दुख छारवारि, तारनको और न आप टारि॥६॥
यहलखिनिज दुखगदहरणकाज,तुमहीनिमित्तकारण इलाज।
जाने तातें मैं शरण आय, उचरोंनिजदुखजोचिरलहाय॥७॥
मैं भ्रम्यो अपनपो विसरिआप, अपनाये विधिफलपुण्य पाप।
निजको परको करता पिछान, परमें अनिष्टता इष्ट ठान॥८॥
आकुलित भयो अज्ञान धारि, ज्योंमृगमृगतृष्णाजानिवारि।
तनपरिणति में आपो चितार, कबहूं न अनुभवो स्वपदसार॥९॥
तुमको विनजाने जो कलेश, पाये सो तुम जानत जिनेश।
पशुनारक नरसुरगति मझार, भव धरिधरि मरयो अनंतबार १०
अब काललब्धिबलतैं दयाल, तुम दरशनपाय भयो खुशाल।
मन शांतभयो मिट सकल द्वंद, चाख्योस्वातमरस दुखनिकंद ११

तातैं अब ऐसी करहु नाथ, बिछुरे न कभी तुअ चरणसाथ।
तुम गुणगणको नहिं छेव देव, जगतारन को तुअ विरदएव १२
आतमके अहित विषय कषाय, इनमें मेरी परिणति न जाय।
मैं रहूं आपमें आप लीन, सो करो होहुँ ज्यों निजाधीन १३
मेरे न चाह कुछ और ईश, रत्नत्रय निधि दीजे मुनीश।
मुझकारज के कारण सुआप, शिवकरहु हरहु मम मोहताप१४
शशि शांति करन तपहरणहेत, स्वयमेव तथा तुम कुशल देत।
पीवत पीयूष ज्यों रोग जाय, त्यों तुमअनुभवतै भव नशाय१५
त्रिभुवन तिहुँकालमँझार कोय, नहिंतुमबिननिजसुखदायहोय।
मो उर यह निश्चय भयो आज, दुखजलधि उतारनतुमजिहाज१६

तुम गुणगणमणि गणपती, गणत न पावहिं पार।
'दौल' स्वल्पमति किमि कहै, नमू त्रियोग सँभार ॥१७॥

संस्कृत स्वयंभू स्तोत्र

येन स्वयंबोधमयेन लोका आश्वासिता केचन चित्तकार्ये।
प्रबोधिता केचन मोक्षमार्गे तमादिनाथं प्रणमामि नित्यं॥१॥
इंद्रादिभिः क्षीरसमुद्रतोयैः संस्नापितो मेरुगिरौ जिनेन्द्रः
यः कामजेता जनसौख्यकारी तं शुद्धभावादजितं नमामि॥२॥
ध्यान प्रबंध प्रभवेन येन निहत्य कर्म-प्रकृतीः समस्ताः।
मुक्तिस्वरूपां पदवीं प्रपेदे तं संभवं नौमि महानुरागात् ॥३॥

स्वप्ने यदीया जननी क्षपायां गजादि वन्ह्यन्तमिदं ददर्श ।
यत्तात इत्याह गुरुः परोयं नौमि प्रमोदादभिनन्दनं तम् ॥४॥
कुवादिवादं जयता महान्तं नयप्रमाणैर्वचनैर्जगत्सु ।
जैनं मतं विस्तिरतं च येन तं देव-देवं सुमतिं नमामि ॥५॥
यस्मावतारे सति पितृधिष्ण्ये ववर्ष रत्नानि हरे-निर्देशात् ।
धनाधिप षण्णवमास पूर्वं पद्मप्रभं तं प्रणमामि साधुम् ॥६॥
नरेन्द्रसर्पेश्वरनाकनाथैर्वाणी भवंती जगृहे स्वचित्ते ।
यस्यात्म बोधः प्रथितः सभायामहं सुपार्श्वं ननु तं नमामि॥७॥
सत्प्रातिहार्यातिशय-प्रपन्नो गुण-प्रवीणो हतदोष-संग ।
यो लोक मोहान्धतमः प्रदीपश्चन्द्रप्रभं तं प्रणमामि भावात्॥८॥
गुप्तित्रयं पंच महाव्रतानि पंचोपदिष्टा समितिश्च येन ।
वभाण यो द्वादशधातपांसि तं पुष्पदंतं प्रणमामि देवं ॥९॥
ब्रह्मव्रतांतो जिन नायकेनोत्तमक्षमादिर्दशधापिधर्मः ।
येनप्रयुक्तो व्रतबंधबुद्ध्या तं शीतलं तीर्थकरं नमामि ॥१०॥
गण जनानन्दकरे धरान्ते विध्वस्त कोपे प्रशमैकचित्तम् ।
यो द्वादशांगश्रुतमादिदेश श्रेयांसमानौमि जिनं तमीशम्॥११॥
मुक्त्यंगनाया रचिताविशाला रत्नत्रयीशेखरता च येन ।
यत्कंठमासाद्य बभूव श्रेष्ठा तं वासुपूज्यं प्रणमामि वेगात्॥१२॥
ज्ञानी विवेकी परमस्वरूपी ध्यानी व्रती प्राणि-हितोपदेशी ।
मिथ्यात्वघाती शिवसौख्यभोजी बभूव यस्तं विमलं नमामि १३॥

आभ्यन्तरं बाह्यमनेकधा यः परिग्रहम् सर्वमपाचकार ।
यो मार्गमुद्दिश्य हितं जनानां वन्दे जिनं तं प्रणमाम्यनन्तं ॥१४॥
सार्द्धं पदार्था नव सप्त तत्वैः पञ्चास्तिकायाश्च न कालकायाः ।
षड्द्रव्य निर्णीतिरलोकयुक्तिर्येनोदिता तं प्रणमामि धर्मं॥१५॥
यश्चक्रवर्ती भुवि पंचमोभूच्छ्रीनन्दनो द्वादशको गुणानां ।
निधिप्रभुः षोडशको जिनेन्द्रस्तं शान्तिनाथं प्रणमामि भेदात्१६
प्रशंसितो यो न बिभर्ति हर्षं विराधितो यो न करोति रोषम् ॥
शीलव्रताद् ब्रह्मपदं गतोयस्तं कुंथुनाथं प्रणमामि हर्षात् ॥१७॥
यः संस्तुतोयः प्रणतः सभाया येसेवितोन्तरगण पूरणाय ।
पदच्युतैः केवलिभिर्जिनस्य देवादिदेवं प्रणमाम्यरं तं ॥१८॥
रत्नत्रयं पूर्वभयान्तरे यो व्रतं पवित्रं कृतवानशेषम् ।
कायेन वाचा मनसा विशुद्ध्या तं मल्लिनाथं प्रणमामि भक्त्या१९
ब्रुवन्नमः सिद्धपदाय वाक्यमित्यग्रहीद्यः स्वयमेव लोचं ।
लौकान्तिकेभ्यः स्तवनं निशम्य वंदे जिनेशं मुनिसुव्रतं तं॥२०॥
विद्यावतं तीर्थकराय तस्मायाहार दानं ददतो विशेषात् ।
गृहेनृपस्याजनिरत्न वृष्टिः स्तौमिप्रमाणान्नयतो नमिं तं॥२१॥
राजीमतिं यः प्रविहाय मोक्षे स्थितिं चकारापुनरागमाय ।
सर्वेषु जीवेषु दयां दधानस्तं नेमिनाथं प्रणमामि भक्त्या॥२२॥
सर्वादिराजाः कमठारितोयैर्ध्यानस्थितस्यैव फणावितानैः ।
यस्योपसर्गं निरवर्त्तयत्तं नमामि पार्श्वं महतादरेण ॥२३॥

भवार्णवं जंतु समूहमेनमाकर्षयामास हि धर्मपोतात ।
मज्जंतमुद्वीक्ष्य य एनमापि श्रीवर्द्धमानं प्रणमाम्यहंतं ॥२४॥
यो धर्मं दशधा करोति पुरुषः स्त्री वा कृतोयस्कृतं
सर्वज्ञध्वनिसंभवं त्रिकरण व्यापार शुद्ध्यानिशं ।
भव्यानां जय मालया विमलया पुष्प.जलिं, दापय
न्नित्यं संश्रिययातनोति सकलं स्वर्गापवर्ग स्थितिम् ।

स्तुति

तुम तरन तारन भव निवारन, भविक मन आनंदनो ।
श्री नाभिनंदन जगत वंदन, आदिनाथ निरजनो ॥१॥
तुम आदिनाथ अनादि सेऊँ, सेय पद पूजा करूँ ।
कैलाश गिरिपर रिषभ जिनवर, पदकमल हिरदै धरूँ ॥२॥
तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्ट कर्म महाबली ।
यह विरद सुनकर शरण आयो, कृपा कीजे नाथ जी ॥३॥
तुम चंद्रवदन सुचंद्र लच्छन, चंद्रपुरी परमेश्वरो ।
महासेन नंदन जगत वंदन, चंद्रनाथ जिनेश्वरो ॥४॥
तुम शांति पांच कल्याण पूजों, शुद्ध मन वचकायजू ।
दुर्भिच्छ चोरी पापनाशन, विघ्न जाय पलाय जू ॥५॥
तुम बाल ब्रह्म विवेकसागर, भव्य कमल विकाशनो ।
श्री नेमिनाथ पवित्र दिनकर, पाप तिमिर विनाशनो ॥६॥

जिन तजी राजुल राज-कन्या, काम-सेना वश करी।
चारित्र रथ चढ़ि भये दूल्हा, जाय शिव रमणी वरी ॥७॥
कंदर्प दर्प सुसर्प लच्चन, कमठ शठ निर्मद कियो।
अश्वसेन नन्दन जगतवंदन, सकल संघ मंगल कियो ॥८॥
जिनधरी बालकपने दीच्चा, कमठमान विदारिके।
श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र के पद, मैं नमों सिरधारिके ॥६॥
तुम कर्मघाता मोच्चदाता, दीन जान दया करो।
सिद्धार्थनंदन जगत-वंदन, महावीर जिनेश्वरो ॥१०॥
त्रय छत्र सोहै सुर नर मोहै, बीनती अवधारिये।
कर जोड़ि सेवक वीनवै प्रभु, आवागमन निवारिये ॥११॥
अब होहु भव भव स्वामि मेरे, मैं सदा सेवक रहों।
कर जोड़ यह वरदान मांगू, मोच्चफल यावत् लहूं ॥१२॥
जो एक माहीं एक राजे, एक माहिं अनेकनो।
इक अनेक की नहीं संख्या, नमो सिद्धनिरंजनो ॥१३॥
मै तुम चरण कमल गुण गाय, बहुविध भक्ति करी मन लाय।
जन्म जन्म प्रभु पाऊँ तोहि। यह सेवाफल दीजे मोहि ॥१४॥
कृपा तिहारी ऐसी होय। जन्मन मरन मिटावो मोय।
बार बार मैं बिनती करूँ। तुम सेयें भव सागर तरूँ ॥१५॥
नाम लेत सब दुख मिट जाय। तुम दर्शन देख्या प्रभु आय।
तुम हो प्रभु देवन के देव। मैं तो करूँ चरण तव सेव॥१६॥

मैं आयो पूजन के काज । मेरो जन्म सफल भयो आज ।
पूजा करके नवाऊँ शीस । मुझ अपराध क्षमहु जगदीश ॥१७॥
सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान ।
मो गरीब की बीनती, सुन लीज्यो भगवान ॥१८॥
दर्शन करते देव का, आदि मध्य अवसान ।
स्वर्गन के सुख भोगकर, पावे मोक्ष निदान ॥१९॥
जैसी महिमा तुम विषै, और धरे नहिं कोय ।
जो सूरज में ज्योति है, तारन में नहिं सोय ॥२०॥
नाथ तिहारे नाम ते, अघ छिनमांहिं पलाय ।
ज्यों दिन कर प्रकाशतें, अंधकार विनशाय ॥२१॥
बहुत प्रशंसा क्या करूँ, मैं प्रभु बहुत अजान ।
पूजा विधि जानूँ नहीं, शरण राखि भगवान ॥२२॥
मंगलं भगवान वीरो मंगलं गौतम गणी ।
मंगलं कुंदकुंदार्यो जैन धर्म्मोस्तु मंगलं ॥२३॥
ॐकारं विन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः ।
कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमोनमः ॥२४॥

॥ इति शुभम् ॥